जम्मू-कश्मीर पर वार्ताकारों की रिपोर्ट

विसंगतियों का पुलिंदा

आशुतोष

जम्मू-कश्मीर वार्ताकारों की रिपोर्ट

विसंगतियों का पुलिन्दा

लेखक
आशुतोष

प्रकाशक
जम्मू-कश्मीर अध्ययन केन्द्र
करगिल भवन, अम्बफला कॉम्पलेक्स
जम्मू

प्रथम संस्करण : 2012

लेखक :
आशुतोष

सहयोग राशि : 10 रुपये मात्र

प्रकाशक :
जम्मू-कश्मीर अध्ययन केन्द्र
करगिल भवन, अम्बफला कॉम्पलेक्स
जम्मू

मुद्रक :
मॉडर्न प्रिन्टर्स

भूमिका

2010 में जम्मू–कश्मीर की समस्याओं के अध्ययन के लिये केन्द्र सरकार द्वारा गठित वार्ताकारों के दल द्वारा अक्तूबर 2011 में सौंपी गयी रिपोर्ट को गृह मंत्रालय द्वारा सात महीने बाद 24 मई 2012 को अपनी वेबसाइट पर सार्वजनिक कर दिया गया।

रिपोर्ट प्रथमदृष्टया खारिज किये जाने योग्य है। यह वार्ताकारों की अराष्ट्रीय सोच तथा अंतरराष्ट्रीय दवाब में केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा राष्ट्रीय हितों से समझौता करने की मानसिक तैयारी को उजागर करती है।

रिपोर्ट का सबसे आपत्तिजनक पहलू है अपने विश्लेषण में वार्ताकारों द्वारा राष्ट्रवादी सोच को नकारा जाना। इस बात के पुष्ट प्रमाण हैं कि जिन सात सौ प्रतिनिधिमण्डलों से मिलने बात रिपोर्ट करती है उनमें से अधिकांश ने अलगाववादी मांगों का विरोध करते हुए राज्य में भारतीय हितों को पुष्ट करने तथा भारतीय संविधान के विभिन्न प्रावधानों को राज्य में लागू किये जाने की मांग की थी।

रिपोर्ट देखने के बाद वे सभी लोग हतप्रभ हैं कि उनकी मांगों को दरकिनार करते हुए अलगाववादी मांगों को न केवल तरजीह दी गयी है बल्कि उन मांगों को अपनी सिफारिशों में ज्यों–का–त्यों जोड़ कर उन्हें वैधानिक आवरण देने का निंदनीय कार्य किया है।

वार्ताकार संभवतः इस हीन भाव से भी ग्रस्त रहे कि उनका कश्मीर से कोई संबंध नहीं है। इस कारण उन पर अलगावादियों की भावनाएं न समझ पाने का आरोप न लगे, संभवतः इसलिये उन्होंने अपने–आप को अलगाववादी मांगों के साथ जोड़ लिया। उनका यह अलगाव–प्रेम भारत–विरोध की शक्ल में रिपोर्ट में अनुभव किया जा सकता है। इस प्रयास में अनेक बार वार्ताकार स्वयं को शेख अब्दुल्ला और हुर्रियत नेताओं से भी ज्यादा कश्मीर हितैषी साबित करने की कोशिश करते नजर आते हैं।

भारत के राष्ट्रीय हितों पर चोट करने वाली इस रिपोर्ट को सिरे से नकारा जाना ही पर्याप्त नहीं है। राष्ट्रीय हित में यह आवश्यक है कि इस प्रश्न पर देश की जनता का क्रोध इस तीव्रता के साथ प्रकट हो कि आगे कोई सरकार अथवा उसके द्वारा अधिकृत समूह दोबारा ऐसी किसी सिफारिशों को करने या उन्हें लागू करने का दुस्साहस न कर सके।

भवदीय

आशुतोष

पृष्ठभूमि

वर्ष 2010 की गर्मियों में कश्मीर घाटी के छः जिलों में बड़ी मात्रा में हुई पत्थरबाजी की घटनाओं ने देश का ध्यान आकर्षित किया। हुर्रियत कांफ्रेंस तथा कट्टरवादी संगठन अहले-हदीस (जिसके कश्मीर में 120 मदरसे तथा लगभग 600 मस्जिदें हैं) के प्रभाव क्षेत्र वाले चार जिलों- बारामूल, पुलवामा, श्रीनगर तथा अनंतनाग और शोपियां शहर में ही यह पत्थरबाजी की घटनाएं हो रहीं थीं। जम्मू के दस जिले, कश्मीर के पांच जिले और लद्दाख के दो जिलों में इस आंदोलन का जरा भी असर नहीं था।

एक ओर जहां यह आन्दोलन पाकिस्तान प्रायोजित था वहीं दूसरी ओर इसे सरकार का अप्रत्यक्ष समर्थन भी हासिल था। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि सुरक्षा बलों तथा सुरक्षा चौकियों पर लगातार हमले होने की स्थिति में सरकार ने उन्हें कठोर कार्रवाई की अनुमति नहीं दी। सुरक्षा बलों द्वारा आत्मरक्षा में की गयी फायरिंग में 104 लोगों की मौत की चर्चा लम्बे समय तक मीडिया में छाई रही। लेकिन इसी अवधि में सुरक्षाबलों पर हुए हमलों में 3500 सुरक्षाकर्मी घायल हुए, यह समाचार अधिक स्थान नहीं पा सका।

देखा यह भी गया कि जब भी आंदोलनकारी बंद का आह्वान करते थे, सरकार कर्फ्यू लगा देती थी। कर्फ्यू के कारण लोग कम निकलते थे जिसे बंद की सफलता के रूप में प्रस्तुत किया जाता था। अलगाववादियों ने रविवार को स्कूल-कॉलेज और बैंक खोलने की अपील की और सरकारी संस्थान रविवार को खुले। सरकार ने न उनके खिलाफ कोई कार्रवाई की जिन्होंने अलगाववादियों के आह्वान पर अपने संस्थानों में काम नहीं किया और न ही रविवार को संस्थानों में काम करने वालों से यह पूछा कि अवकाश के दिन किस की अनुमति से संस्थान खुले।

अलगाववादी आंदोलनकारियों तथा उनके समर्थकों ने मीडिया में इसे जम्मू-कश्मीर में भारतीय सुरक्षाबलों की क्रूरता के प्रतीक के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। राज्य के गुज्जर, शिया, पहाड़ी, राष्ट्रवादी मुसलमान, कश्मीरी सिख, कश्मीरी पंडित, लद्दाख के निवासी, शरणार्थी समूह, डोगरे तथा बौद्ध, कोई भी इस आन्दोलन में शामिल नहीं हुआ। पर वातावरण ऐसा बना दिया गया जैसे पूरा जम्मू-कश्मीर आजादी के नारे लगा रहा है और भारत से अलग होने पर आमादा है।

अगलाववादी तत्व जब आजादी का ढ़िंढ़ोरा पीट रहे थे तो राज्य में सत्तारूढ़ नेशनल कांफ्रेंस और कांग्रेस गठबंधन तथा प्रतिपक्ष पीपल्स डेमोक्रेटिक

पार्टी के नेता भी क्रमशः स्वायत्तता और स्वशासन की अपनी मांग को आगे बढ़ा रहे थे। यहां तक कि केन्द्र में सत्तारूढ़ कांग्रेस भी उनके स्वर में स्वर मिला कर बोल रही थी।

मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला ने जब जम्मू–कश्मीर के विलय पर सवाल उठाते हुए कहा कि "जम्मू–कश्मीर का भारत में बाकी राज्यों की तरह पूर्ण विलय नहीं हुआ। विलय की कुछ शर्तें थीं जिन्हें भारत ने पूरा नहीं किया।" यह तथ्य है कि महाराजा हरिसिंह ने भी उसी विलय पत्र पर हस्ताक्षर किये थे जिस पर शेष 568 रियासतों ने किये थे। फिर भी केन्द्रीय गृहमंत्री पी. चिदम्बरम ने उमर के इस बयान का खण्डन करने के स्थान पर कहा कि विलय कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में हुआ था, यह बाकी राज्यों से अलग था। हमने 1952, 1975 और 1986 में कुछ वादे किये थे, उन्हें पूरा तो करना ही होगा। वे कौन से वायदे पूरे करना चाहते हैं, इसका खुलासा करने के स्थान पर उन्होंने कहा "गुप–चुप वार्ता होगी, कूटनीति होगी और समाधान होने पर सबको पता लग जायेगा।"

उमर ने आगे कहा कि "यह दो देशों (भारत और पाकिस्तान) के बीच की समस्या है जिसमें पिछले 63 वर्षों से जम्मू–कश्मीर पिस रहा है। स्वायत्तता ही एक मात्र हल है। 1953 से पहले की स्थिति बहाल करनी चाहिये।" इस पर चिदम्बरम कहते हैं – "जम्मू–कश्मीर का एक विशिष्ट इतिहास और भूगोल है, इसलिये शेष भारत से अलग इसका समाधान भी विशिष्ट ही होगा। स्वायत्तता पर वार्ता होगी और उस पर विचार किया जा सकता है।"

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी राजनैतिक समाधान की आवश्यकता पर बल देते हुए सशस्त्र बल विशेषाधिकार अधिनियम को नरम करने, कुछ क्षेत्रों से हटाने, सर्वसम्मति बनने पर स्वायत्तता के प्रस्ताव को लागू करने जैसे संकेत दिये।

जम्मू–कश्मीर की समस्या का राजनैतिक हल तलाशने के लिये संसद सदस्यों का एक सर्वदलीय प्रतिनिधिमण्डल 20–22 सितम्बर 2010 को जम्मू–कश्मीर के प्रवास पर गया। इस प्रतिनिधिमंडल में विभिन्न राजनीतिक दलों के 34 संसद सदस्य/पूर्व संसद सदस्य शामिल थे। इससे पूर्व 15 सितम्बर को आयोजित सर्वदलीय बैठक को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने कहा – जम्मू–कश्मीर में स्थाई शांति और समृध्दि का एक ही रास्ता है और वह है बातचीत और विचारों के आदान–प्रदान का। यह वास्तव में दुखद है कि हमारे कुछ लोगों ने हाल के दिनों के दौरान इस मार्ग को छोड़ दिया है। मुझे यह देखकर धक्का लगा और मैं दुखी हुआ कि युवा पुरुष और महिलाएं, यहां तक कि बच्चे भी गलियों में प्रदर्शन में शामिल हो रहे हैं। हालांकि कुछ प्रदर्शन तात्कालिक हो सकते हैं, लेकिन इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि कुछ वारदातें

विशिष्ट गुटों की साजिश थीं।

वहां से लौटने पर, दिल्ली में उपलब्ध दल के सदस्यों से परामर्श करने के बाद गृहमंत्री ने प्रधानमंत्री को एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। 25 सितम्बर, 2010 को सुरक्षा संबंधी मंत्रिमंडल समिति ने इस रिपोर्ट पर विचार किया और एक 8–सूत्रीय योजना अनुमोदित की। बैठक में गृहमंत्री श्री पी. चिदम्बरम ने घोषणा की कि –

1. राजनीतिक दलों/समूहों, युवाओं एवं छात्र संगठनों, नागरिक सामाजिक संगठनों और हितधारकों सहित जम्मू–कश्मीर के सभी तबके के लोगों के साथ संवाद क़ायम रखने की प्रक्रिया शुरू करने के लिए जाने–माने व्यक्ति की अध्यक्षता में वार्ताकारों के समूह की नियुक्ति।
2. राज्य सरकार को पत्थरबाजी या कानून के उल्लंघन संबंधी किसी ऐसी ही घटना के लिए गिरफ्तार या हिरासत में लिए गए सभी विद्यार्थियों को तुरंत रिहा करने और ऐसे युवाओं एवं विद्यार्थियों के खिलाफ दर्ज सभी मामले वापस लेने की सलाह।
3. राज्य सरकार को पीएसए के तहत नज़रबन्द सभी लोगों के मामलों की तुरंत समीक्षा करने और समुचित मामलों में नज़रबन्दी हटाने की सलाह।
4. राज्य सरकार से तुरंत संयुक्त कमान की बैठक बुलाने तथा कश्मीर घाटी, विशेषकर श्रीनगर में सुरक्षा बलों की तैनाती की समीक्षा करने का आग्रह। इसके साथ ही श्रीनगर एवं अन्य कस्बों में बंकरों और चेक पाइंटों इत्यादि को हटाने के संबंध में तथा अशांत क्षेत्रों के रूप में अधिसूचित क्षेत्रों की समीक्षा करने का भी आग्रह।
5. 11 जून, 2010 से नागरिक अशांति में मारे गए प्रत्येक व्यक्ति के संबंधी या परिवारों को 5–5 लाख रुपए की अनुग्रह राहत।
6. जम्मू क्षेत्र और लद्दाख क्षेत्र की, खासतौर पर ढांचागत क्षेत्र में विकास ज़रूरतों का आकलन करने और उपयुक्त सिफारिशें देने के लिए लिए दो विशेष टास्कबलों की नियुक्ति।
7. वर्तमान शिक्षा सत्र (2010–11) में परीक्षाएं आयोजित कराई जाएं, यह सुनिश्चित करने के लिए राज्य सरकार से सभी स्कूल, कालेज, विश्वविद्यालयों और अन्य– शिक्षण संस्थाओं को तुरंत पुनः खोलने, और यदि ज़रूरी हो तो विशेष कक्षाएं लगाने के लिए कदम उठाने का आग्रह।
8. राज्य् सरकार को स्कूल कक्ष, ऑडिटोरियम, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, खेल के मैदान, शौचालय परिसर इत्यादि मौजूदा बुनियादी ढांचे में सुधार और नए निर्माण के लिए स्कूलों और कालेजो को अनुदान उपलब्ध, कराने के वास्ते अतिरिक्त केन्द्रीय सहायता के रूप में 100 करोड़ रुपए की राशि उपलब्ध कराना।

सुरक्षा संबंधी मंत्रिमंडल समिति के निर्णयों के बाद जम्मू एवं कश्मीर में 27 सितम्बर, 2010 को स्कूल और कॉलेज फिर से खोले गए। इसके अतिरिक्त, 29 सितम्बर, 2010 को एकीकृत कमान की एक बैठक आयोजित की गई तथा 16 बंकरों/जांच–स्थलों (चेक–प्वाइन्ट्स) को हटाने तथा सिविल उपद्रवों में गिरफ्तार/नजरबंद किए गए छात्रों सहित 53 व्यक्तियों को छोड़ने के संबंध में निर्णय लिए गए। 13 अक्तूबर को वार्ताकारों के तीन सदस्यीय दल का गठन किया गया।

वार्ताकारों की नियुक्ति और रिपोर्ट

केन्द्र सरकार ने जम्मू और कश्मीर के लोगों के सभी तबकों के साथ सतत बातचीत आयोजित करने के लिए तीन मध्यस्थों के एक समूह को नियुक्त किया। इनमें जाने–माने पत्रकार डॉ. दिलीप पडगांवकर, सूचना आयुक्त प्रोफेसर एम.एम. अंसारी और दिल्ली नीति समूह की ट्रस्टी प्रोफेसर श्रीमती राधा कुमार शामिल थीं। इस समूह का अध्यक्ष डॉ. दिलीप पडगांवकर को बनाया गया।

समूह को जम्मू और कश्मीर के लोगों के साथ सतत बातचीत के माध्यकम से उनकी समस्याओं को समझने और भविष्य के लिए एक कार्यक्रम तैयार करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। सरकार ने आशा व्यक्त की कि राजनीतिक विचार के सभी पक्षों के साथ बातचीत करने के बाद ये लोग एक ऐसी राह सुझाएंगे, जो वास्तव में जम्मू और कश्मीर के लोगों और खास तौर पर युवाओं की आकांक्षाओं के अनुरूप होगी।

श्री दिलीप पडगांवकर एक पत्रकार, संपादक एवं लेखक हैं। उन्होंने द टाइम्स ऑफ इंडिया के कार्यकारी संपादक एवं संपादक समेत पत्रकारिता के क्षेत्र में विभिन्न पदों पर कार्य किया है। वर्तमान में वह एशिया पेसिफिक कम्यूनिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के साथ कार्यरत हैं।

प्रोफेसर एम.एम. अंसारी केन्द्रीय सूचना आयोग, नई दिल्ली में सूचना आयुक्त थे। एक अर्थशास्त्री एवं शिक्षा विशेषज्ञ के तौर पर कई संस्थानों में उन्होंने वरिष्ठ पदों पर कार्य किया।

प्रोफेसर श्रीमती राधा कुमार जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय में शांति व संघर्ष समाधान के लिए मंडेला केन्द्र की निदेशक और दिल्ली नीति समूह की ट्रस्टी हैं। उन्होंने शांति अध्ययनों व संघर्ष के समाधान से संबंधित अंतराष्ट्रीय निकायों में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर कार्य किया है। गृह मंत्रालय के अनुसार नस्लीय संघर्षों एवं शांति प्रक्रियाओं की विशेषज्ञ के रूप में उनका चयन किया गया।

तीनों वार्ताकारों ने 11 माह तक प्रतिमाह लगभग एक सप्ताह जम्मू–कश्मीर में बिताया। इस बीच उन्होंने सभी 22 जिलों में प्रवास किया। सभी राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, स्थानीय स्तर के छोटे–बड़े राजनैतिक दलों के प्रतिनिधियों से भेंट की। समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले 700 से अधिक प्रतिनिधिमण्डलों से तथा लगभग 1000 पंचों–सरपंचों से मिले।

जम्मू में एक तथा कश्मीर में दो गोलमेज कांफ्रेंस का आयोजन किया गया। स्थानीय युवाओं के साथ 20 बैठकें कीं। लनगेट, कठुआ और कुपवाड़ा में तीन बड़ी जनसभाएं की। धार्मिक नेताओं, व्यापारियों, तथा मजदूरों के संगठनों, महिला

समूहों, पत्रकारों, कल्याणकारी संगठनों, पत्थरबाजी की घटनाओं में मारे गये लोगों के परिजनों, जेल में बंद आतंकवादियों से उन्होंने मुलाकात की। पुलिस, अर्धसैनिक बलों तथा सेना के अधिकारियों से मिले।

यद्यपि ऑल पार्टी हुर्रियत कांफ्रेंस ने वार्ताकार दल का वहिष्कार किया था जिस के कारण कोई भी प्रमुख अलगाववादी नेता उनसे नहीं मिला। किन्तु हुर्रियत के मीरवाएज व गिलानी धड़े तथा जेकेएलएफ के कुछ सदस्यों तथा छोटे स्तर के नेताओं से उन्होंने बात की।

वार्ताकारों के अनुसार उन्होंने निष्कर्ष तक पहुंचने के लिये पहले से मौजूद प्रकाशित सामग्री और दस्तावेज, केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा गठित विभिन्न आयोगों तथा कार्यशील समूहों की रिपोर्ट, राजनैतिक दलों के प्रस्ताव तथा जम्मू–कश्मीर राज्य के भारतीय संघ में विलय से संबंधित आधिकारिक दस्तावेजों का अध्ययन किया।

रिपोर्ट के अनुसार जब वार्ताकारों के समूह की नियुक्ति की गयी उस समय राज्य में भारी उत्तेजना व्याप्त थी। पत्थरबाजी के आन्दोलन में 104 नौजवानों की दर्दनाक मौत हुई थी(यहां वे हजारों सुरक्षाकर्मियों के पत्थरबाजों के हाथों घायल होने का उल्लेख नहीं करते)। जनता का क्रोध उबल रहा था और इस बात की प्रबल संभावना थी कि जम्मू–कश्मीर पुनः आतंक की गिरफ्त में आ जाय तथा बन्दूकों का राज फिर से लौट आये।

अपनी पीठ ठोकते हुए वे कहते हैं कि उनके कार्यकाल के ग्यारह महीनों में स्थितियां सुधरीं। इसका श्रेय वे लोगों की इच्छाशक्ति, केन्द्र व राज्य के बीच बेहतर ताल–मेल तथा सरकार द्वारा सबक सीखने को देते हैं। उनके अनुसार राज्य की परिस्थितियां अत्यंत उलझी हुई और जटिल मिश्रण के रूप में हैं जिसे सुलझाना अत्यंत कठिन काम है। यहां वे यह बताना नहीं भूलते कि उन्होंने यह जटिल कार्य कर दिखाया है।

50 पृष्ठों के संलग्नकों सहित कुल 176 पृष्ठों की अपनी रिपोर्ट, जिसे उन्होंने जम्मू–कश्मीर की जनता के साथ नया करार नाम दिया है, को प्रस्तुत करते हुए वे इसे 21 वीं शताब्दी में जम्मू–कश्मीर की जनता की आकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए तैयार किया गया प्रस्ताव कह कर संबोधित करते हैं।

रिपोर्ट का कार्यसाधक सारांश

1. इस प्रतिवेदन की सामग्री मुख्यतः जम्मू और कश्मीर के सब 22 जिलों में 700 से अधिक प्रतिनिधिमण्डलों और तीन गोलमेज़ सम्मेलनों में समूहों के साथ वार्ता का परिणाम है। हमने 13 अक्टूबर 2012 को अपनी नियुक्ति के बाद यह सब कार्य किया। प्रतिनिधि मण्डलों में राज्य और स्थानीय स्तर की राजनीतिक पार्टियों, मानव अधिकारों की रक्षा में लगे सिविल सोसायटी समूहों, विकास और सुशासन के कार्य में लगे संघों, छात्र संगठनों, शैक्षिक बन्धु–बान्धवों, वकीलों के संघों, पत्रकारों और व्यापारियों, व्यापार संघों, मज़हबी संस्थाओं, विशिष्ट जातिगत समूहों के सामुदायिक संगठनों, लड़ाई या स्थानिक हिंसा के कारण अपने घरों से उजड़े लोगों, नव–निर्वाचित पंचायत सदस्यों, पुलिस के उच्च अधिकारियों, अर्धसैन्यबलों और सेना का प्रतिनिधित्व था। तीन गोल मेज़ सम्मेलनों में, जिनमें से दो श्रीनगर में और एक जम्मू में हुआ, एक साथ महिलाएं, पढ़े–लिखे लोग / स्वयंसेवक और सांस्कृतिक कार्यकर्ता शामिल हुए जो राज्य के तीनों क्षेत्रों अर्थात् जम्मू, कश्मीर और लद्दाख से संबंधित थे।

जिन तीन बड़ी सभाओं में हम शामिल हुए उनमें कई हज़ार सामान्य–नागरिक आए और उन्होंने अनेक मामलों पर अपने विचार प्रकट किए। इसके साथ–साथ श्रीनगर में केन्द्रीय कारागार में हम दहशतगर्दों और पत्थर मारने वालों से भी मिले और मानव अधिकारों के दुरुपयोग के तथाकथित शिकार लोगों के परिवारों से भी मिले। इस प्रतिवेदन में जम्मू और कश्मीर से संबंधित व्यापक साहित्य, विद्वत्तापूर्ण अध्ययन और पत्रकारों द्वारा दी गई रिपोर्टें, मुख्यधारा और मुख्यधारा से बाहर के राजनीतिक संगठनों द्वारा जारी किए गए वे प्रलेख जिनमें राजनीतिक समझौते के प्रस्ताव थे, चिंतकों की रचनाएं, पिछले कई दशकों के दौरान केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा स्थापित विभिन्न कार्यकारी समूहों और आयोगों की रिपोर्टें, भारत संघ में जम्मू और कश्मीर के विलय से लगाकर राजनीतिक सांविधानिक क्रियाकलापों से संबंधित सरकारी प्रलेख शामिल किए गए हैं।

2. कश्मीर घाटी में वर्तमान उत्पीड़न की गहरी भावना का पूरा लेखा–जोखा लेकर हमने राजनीतिक समझौता प्रस्तावित किया है। निश्चित रूप से इस पर पूरी संवेदनशीलता से गौर करने की जरूरत है। इसके साथ–साथ हमने किसी एक क्षेत्र या मानव जातीय या धार्मिक

समुदाय के नज़रिए से राज्य को सताने वाले असंख्य मामलों को देखने की फाँसों से बचने की कोशिश की है।

हमारे साथ हुई वार्ताओं से यह पता चला है कि जनता की मान–मर्यादा से जीवन जीने की व्यापक इच्छा है। विशेषतः उन्होंने निम्नलिखित इच्छाएं व्यक्त की हैं:–

- मज़हबी अतिवाद संबंधी सब शक्तियों, मानव जातीय या क्षेत्रीय दुराग्रहों और बहुसंख्यावादी उस अहंभाव जो साम्प्रदायिक और अंतरक्षेत्रीय भाईचारे को अस्त–व्यस्त करता है, इन सबसे छुटकारा।
- एक अपारदर्शी और गैर–जिम्मेदार प्रशासन से छुटकारा।
- उन आर्थिक ढाँचों, नीतियों और कार्यक्रमों से छुटकारा, जो राज्य के सब भागों के समग्र आर्थिक विकास और संतुलित उन्नति को बढ़ाने संबंधी प्रयासों को कमज़ोर करते हैं।
- उन सब सामाजिक ढाँचों और नीतियों से छुटकारा जो वंचित सामाजिक समूहों, अल्पसंख्यकों और महिलाओं को हानि पहुँचाते हैं।
- उन कठोर कानूनों या कठोरता से लागू किए जाने वाले कानूनों और न्यायिक देरियों से छुटकारा जिनके कारण उचित असहमति वाले मामले सुलझ नहीं पाते।
- उस अभित्रास और हिंसा से छुटकारा जिसके कारण लोगों को अपने पर्यावास (हैबिटैट) छोड़ने पर मज़बूर होना पड़ता है।
- सब समुदायों की मज़हबी, भाषायी और सांस्कृतिक अस्मिता को मिल रही धमकियों से छुटकारा।
- प्रचार माध्यमों, पत्रकारों, सूचना–अधिकार कार्यकर्ताओं, नागरिक अधिकारों के लिए संघर्षरत समूहों और सांस्कृतिक संगठनों पर बनाए जा रहे दबावों से छुटकारा।

3. हमारा विश्वास है कि निम्नलिखित बिन्दुओं पर व्यापक सहमति विद्यमान है:–

- सब पणधारियों (जिनका सब कुछ दाँव पर लगा है) जिनमें वे भी शामिल हैं जो मुख्यधारा के भाग नहीं हैं, के बीच संवाद के द्वारा जम्मू–कश्मीर में राजनीतिक समझौता होना चाहिए।
- लोकतंत्र और बहुलतावाद के प्रति उनका समर्पण असंदिग्ध होना चाहिए।

भारत संघ के भीतर जम्मू और कश्मीर एकल सत्ता के रूप में बना रहना चाहिए।

राज्य की अलग पहचान की गारंटी देने वाला अनुच्छेद 370 बना रहना

चाहिए। विगत दशाब्दियों में हुए इसके क्षरण का पुनः मूल्यांकन किया जाना चाहिए ताकि इसमें उन शक्तियों का समावेश हो जाए जिनकी राज्य को अपने तौर पर लोगों के कल्याण के बढ़ावे के लिए ज़रूरत है।

- राज्य के नागरिक और भारतीय नागरिक के नाते पिछले तनावों के बिना लोग अपने लोकतांत्रिक अधिकारों का प्रयोग कर सकें अन्यथा पारदर्शी और जिम्मेदार शासन सुनिश्चित नहीं किया जा सकता और न ही स्वाधीनता और सांस्कृतिक पहचान, सम्मान और प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा सुनिश्चित की जा सकती है।
- जम्मू, कश्मीर और लद्दाख तीनों क्षेत्रों और विभिन्न मानव–जातीय और मज़हबी समूहों, लड़ाइयों या स्थानिक हिंसा के कारण अपने घरों से बेघर हुए लोगों के उप क्षेत्रों की भिन्न–भिन्न आकांक्षाओं की पूर्ति के प्रति ध्यान दिया जाना चाहिए।
- क्षेत्र, जिला, खण्ड और पंचायत / नगर–पालिका परिषद स्तर पर निर्वाचित निकायों को वित्तीय और प्रशासकीय शक्तियां देकर सशक्त बनाए जाने की आवश्यकता है।
- राज्य को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भरता देने के लिए केन्द्र और राज्य के बीच एक नई वित्तीय व्यवस्था की आवश्यकता है। इसके लिए पहाड़ी, पिछड़े और दूरस्थ क्षेत्रों और सामाजिक रूप से वंचित समूहों के लिए विशेष व्यवस्था की आवश्यकता होगी।
- नियंत्रण रेखा और अंतर्राष्ट्रीय सीमा के आर–पार जनता, साजो–समान और सेवाओं का बाधा–रहित संचलन तत्परता से सुनिश्चित किया जाना चाहिए जिससे आपसी हित और आवश्यकताओं के सब क्षेत्रों में पूर्व शाही राज्य के दोनों भागों के बीच संस्थागत सहयोग हो जाए।
- यह अच्छी तरह से तभी हो सकता है जब उस जम्मू और कश्मीर के, जो इस समय पाकिस्तान के नियंत्रण में है, विभिन्न भागों में राज्य, क्षेत्र, उपक्षेत्र स्तर पर लोकतांत्रिक शासन के संस्थान स्थापित हो जाएं।

4. इस सहमति के निर्माण के लिए हमारी संस्तुति है कि सन् 1952 के समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद राज्य में लागू हुए भारतीय संविधान के अनुच्छेदों और सब केन्द्रीय अधिनियमों की समीक्षा के लिए सांविधानिक समिति बनाई जाए। इसके प्रधान ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्ति होने चाहिए जिन्हें जम्मू और कश्मीर के लोगों और संपूर्ण भारत के लोगों का विश्वास प्राप्त हो। इसके सदस्यों में ऐसे सांविधानिक विशेषज्ञ होने चाहिए जिन्हें सब प्रमुख पणधारियों का विश्वास सुलभ हो। इसके

निष्कर्ष जो छह महीने के भीतर प्राप्त होने हैं, उन सभी पर बंधनकारी होंगे।

सांविधानिक समिति को हमारे द्वारा प्रस्तावित निम्नलिखित आधार पर समीक्षा करने का अभिदेश (मेन्डेट) दिया जाएगा :

इसे (उस समिति को) जम्मू और कश्मीर के दोहरे चरित्र को ध्यान में रखना होगा अर्थात् यह भारत संघ की एक घटक इकाई है और इसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 370 में उल्लिखित उक्त संघ में विशेष दर्जा प्राप्त है और राज्य के लोगों की भी दोहरी स्थिति है अर्थात् वे राज्य और भारत दोनों के नागरिक हैं। इसलिए इस समीक्षा से यह निर्धारण करना होगा कि क्या और किस हद तक उन केन्द्रीय अधिनियमों और भारत के संविधान के अनुच्छेदों ने, जो राज्य पर संशोधन सहित या संशोधन के बिना लागू किए गए हैं, जम्मू और कश्मीर की विशेष स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है और राज्य की जनता का कल्याण करने वाली सरकार की शक्तियों को छोटा किया है। सांविधानिक समिति को भविष्य–उन्मुखी होना चाहिए अर्थात् इसे पूर्णतया राज्य की शक्तियों के आधार पर समीक्षा करनी चाहिए जिनकी आवश्यकता राज्य को जम्मू–कश्मीर और लद्दाख तीनों क्षेत्रों और इसके उपक्षेत्रों के लोगों और समुदायों की आकांक्षाओं, शिकायतों, आवश्यकताओं, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हितों से निबटने के लिए जरूरत है। इस संबंध में समिति को यह बताना पड़ेगा कि तीनों क्षेत्रों के शासन के सब स्तरों यानि क्षेत्रीय, जिला, पंचायत/नगर–पालिका परिषद को राज्य सरकार की तरफ से किस मात्रा में विधायी, वित्तीय और प्रशासकीय शक्तियां दी जानी चाहिए।

सांविधानिक समिति की सिफारिशें आम सहमति द्वारा की जानी चाहिए जिससे कि वे राज्य की विधान सभा और संसद में प्रतिनिधित्व प्राप्त सब पणधारियों को स्वीकार्य हों। अगला कदम राष्ट्रपति जी को उठाना होगा जो संविधान के अनुच्छेद 370 के खण्ड (1) और (3) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का इस्तेमाल करके सांविधानिक समिति की सिफारिशों का समावेश करते हुए एक आदेश जारी करके किया जाएगा। इस आदेश की अभिपुष्टि संसद के दोनों सदनों में एक विधेयक प्रस्तुत करके की जाएगी और साथ–साथ राज्य विधान मण्डल के दोनों सदनों में प्रत्येक सदन में मतदान करा के उपस्थित कुल सदस्यों के दो तिहाई बहुमत के द्वारा अभिपुष्टि करानी आवश्यक होगी। इसके बाद इसे राष्ट्रपति जी की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाएगा।

इस क्रियाविधि के पूरा होने पर अनुच्छेद 370 के खण्ड (1) और (3) क्रियाशील नहीं रहेंगे और इसके बाद अंतिम आदेश की तारीख से उक्त खण्डों के अधीन राष्ट्रपति जी के द्वारा कोई भी आदेश जारी नहीं किया जाएगा।

5. संविधानिक समिति के कार्य को सुविधाजनक बनाने के लिए हम अपने सुझाव नीचे सूचीबद्ध कर रहे हैं:-

हम जम्मू और कश्मीर के साथ एक नया समझौता चाहते हैं। इसमें व्यापक तौर पर राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मामले होंगे।

राजनीतिक घटक: केन्द्र- राज्य संबंध

हमारा विश्वास है कि पिछले छह दशकों में राज्य पर लागू किए केन्द्रीय कानूनों के बने रहने से कोई जोरदार आपत्तियां पैदा नहीं होनी चाहिए। उन्हें उस रूप में ही देखा जाना चाहिए जैसे वे हैं: अहानिकर कानून जो राज्य को और इसकी जनता को लाभप्रद रहे हैं और राज्य इनके कारण अंतर्राष्ट्रीय मानकों, मापदण्डों और विनियमों के अनुरूप बन सका है। उदाहरण के लिए अफीम, समाचार--पत्र और पुस्तकों का पंजीयन, मज़दूरी का भुगतान और बीमा संबंधी कानून।

हमारा यह विश्वास है कि सातवीं अनुसूची की सूची में से कुछ विषय राज्य को अंतरित कर दिए जाएं तो राष्ट्रीय हितों पर विशेष प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा। नए समझौते के राजनीतिक घटकों के अध्याय में इस संबंध में विस्तृत सुझाव दिए गए हैं। वस्तुतः जो भविष्य–उन्मुखी मार्ग हमने सुझाया है – उसमें रणनीतिक, राजनीतिक, आर्थिक और राज्य में सांस्कृतिक परिवर्तन, संपूर्ण भारत में, दक्षिण एशियाई क्षेत्र में और वैश्वीकरण के फलस्वरूप उसके आगे होने वाले परिवर्तनों पर पूरा ध्यान रखा जाना है – इस परिप्रेक्ष्य में भारत के संविधान के उन अनुच्छेदों पर जो राज्य को लागू किए गए हैं त्वरित समझौता कर लेने में पणधारियों को सुगमता होगी।

विवाद के कुछ मामलों में हमारी सिफारिशें निम्नलिखित हैं:–

'संविधान के अनुच्छेद 370 के शीर्षक और भाग के शीर्षक से 'अस्थायी' शब्द हटाना। इसके बजाए अनुच्छेद 371 (महाराष्ट्र और गुजरात), अनुच्छेद 371–ए (नागालैण्ड), अनुच्छेद 371–बी (असम), अनुच्छेद 371–सी (मणिपुर), अनुच्छेद 371–डी और ई (आन्ध्र प्रदेश), अनुच्छेद 371--एफ (सिक्किम), अनुच्छेद 371–जी (मिज़ोरम), अनुच्छेद 371–एच (अरुणाचल प्रदेश), अनुच्छेद 371–आई (गोवा) के अधीन अन्य राज्यों की तर्ज पर 'विशेष' शब्द रखा जाए।

राज्यपाल के चयन के लिए राज्य सरकार विपक्षी पार्टियों से परामर्श करके राष्ट्रपति को तीन नाम भेजेगी। आवश्यक होने पर राष्ट्रपति अधिक सुझाव माँग सकते हैं। राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी और वह राष्ट्रपति जी

की कृपा से पदधारण करेगा।

अनुच्छेद 356: वर्तमान में राज्यपाल की कार्रवाई को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है। वर्तमान व्यवस्था इस परन्तुक के साथ जारी रह सकती है कि राज्यपाल राज्य विधान मण्डल को निलम्बित अवस्था में रखेगा और तीन महीने के भीतर नए चुनाव कराएगा।

अनुच्छेद 312: अखिल भारतीय सेवाओं से लिए जा रहे अधिकारियों का अनुपात धीरे–धीरे कम किया जाएगा और प्रशासनिक दक्षता में रुकावट बिना राज्य की सिविल सेवा से लिए जाने वाले अधिकारियों की संख्या बढ़ाई जाएगी।

अंग्रेजी में गवर्नर और मुख्यमंत्री के नाम जैसे आज हैं वैसे ही रहेंगे। उर्दू प्रयोग के दौरान उर्दू पर्यायवाची शब्द इस्तेमाल किए जा सकते हैं।

तीन क्षेत्रीय परिषदें बनाना, जम्मू, कश्मीर और लद्दाख के लिए अलग–अलग (लद्दाख आगे से कश्मीर का एक मण्डल नहीं रहेगा)। उन्हें कुछ विधायी, कार्यकारी और वित्तीय शक्तियां दी जाएं। समग्र पैकेट के भाग के रूप में पंचायती राज संस्थाओं को राज्य के स्तर पर, ग्राम पंचायत, नगर–पालिका परिषद या निगम के स्तर पर कार्यकारी और वित्तीय शक्तियां भी देनी होंगी। ये सब निकाय निर्वाचित होंगे। महिलाओं, अनुसूचित जाति / जनजाति, पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के लिए प्रावधान होंगे। (भाग–4 देखिए)

विधायक पदेन सदस्य होंगे, जिन्हें मतदान का अधिकार होगा।

संसद राज्य के लिए कोई कानून तब तक नहीं बनाएगी जब तक इसका संबंध देश की आंतरिक और बाहरी सुरक्षा से और इसके महत्त्वपूर्ण आर्थिक हित, विशेषतः ऊर्जा और जल संसाधनों की उपलब्धि के मामलों से न हो।

पूर्व शाही रियासत के सब भागों में ये परिर्वतन समान रूप से लागू होने चाहिए। नियंत्रण रेखा के आर–पार सहयोग के लिए सब अवसरों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। इसके लिए पाकिस्तान नियंत्रित जम्मू और कश्मीर में पर्याप्त सांविधानिक परिवर्तन आवश्यक होंगे।

दक्षिण और मध्य एशिया के बीच जम्मू और कश्मीर एक सेतु बन जाए इसके लिए सब उचित उपाय करने होंगे।

6. सातवीं अनुसूची की सूची में से वे विषय जो राज्य विधान मण्डल से क्षेत्रीय परिषदों को अंतरित किए जा सकते हैं, हमारी रिपोर्ट में विस्तार में दिए गए हैं।

राज्य विधान मण्डल को चाहिए कि राज्य विधान मण्डल को अंतरित सूची के विषयों में से क्षेत्रीय परिषदों को कुछ विषय दे देने के बारे में विचार करे। गोरखालैण्ड पर हुए समझौते के ए और बी भागों में सूचीबद्ध विषयों पर भी विचार किया जा सकता है।

पंचायती राज संस्थाओं को दी जाने वाली वित्तीय और प्रशासकीय शक्तियां भारत के संविधान के 73वें और 74वें संशोधनों की तर्ज पर होंगी।

7. बी–सांस्कृतिक सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय)

राज्य के तीनों क्षेत्रों के पुनः एकीकरण को बढ़ावा देने के लिए नीचे लिखे सांस्कृतिक कदम उठाए जाएं:–

अंतर और अंतः कश्मीर संवाद आरंभ किए जाएं, छात्रों, लेखकों, कलाकारों और शिल्पकारों का आदान–प्रदान शुरू किया जाए, कलाओं के लिए उचित मूलभूत ढाँचा बनाया जाए, बहु–सांस्कृतिक पाठ्यचर्या विकसित की जाए, राज्य की अनेक भाषाओं में अनुवाद की सेवाओं की व्यवस्था की जाए, राज्य की लोक–परंपराओं को पुनः मजबूत किया जाए, नियंत्रण रेखा के आर–पार पर्यटन को बढ़ावा दिया जाए और राज्य की भाषाओं में रेडियो और टीवी के कार्यक्रम आरंभ किए जाएं।

8. सी– आर्थिक और सामाजिक सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय)

सरकार–जनता की साझेदारी के आधार पर सामाजिक–आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए अन्य भारतीय राज्यों के सर्वोत्तम तौर तरीके अपनाए जाएं; उद्योग को बढ़ावा देने के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र बनाए जाएं जिनका विस्तार उत्तर–पूर्वी राज्यों की तर्ज पर वित्तीय और आर्थिक प्रोत्साहन देकर किया जाए; कश्मीरी हस्तशिल्प को बढ़ावा देने के लिए आकर्षक निर्यात प्रोत्साहन दिए जाएं; बागवानी उद्योग में उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए तकनीकी और वित्तीय सहायता का विस्तार किया जाए; राज्य की पारिस्थितिकी और जैव विविधता का संरक्षण किया जाए; सुरक्षा बलों के अधिकार में जो औद्योगिकी संस्थापन और अन्य भवन हैं उनको शीघ्र खाली कराया जाए; प्राकृतिक संसाधनों के बतौर जो खनिज और पदार्थ हैं, उनके दोहन का अध्ययन किया जाए; अंतर्राष्ट्रीय स्थानों से पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए श्रीनगर में अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे का संचालन आरंभ किया जाए; राज्य के विभिन्न क्षेत्रों को जोड़ने वाले और सीमाओं के आर–पार रेललाइनों और सड़कों की आधारभूत ढांचागत परियोजनाओं को पूरा करने के काम में तेजी लाई जाए; केन्द्रीय क्षेत्र में बिजली उत्पादन की परियोजनाओं को राज्य को दे दिया जाए; पहाड़ी, दूरस्थ और पिछड़े क्षेत्रों को विशेष विकास क्षेत्र घोषित कर दिया जाए।

एक समग्र शैक्षिक नीति का होना; स्वास्थ्य योजनाओं का प्रभावी कार्यान्वयन और पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों का कार्यान्वयन भी आवश्यक है।

9. कार्ययोजना

इन राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्ययोजना संवाद क्रियाविधि की विश्वसनीयता, मुख्य सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय) के कार्यान्वयन और प्रमुख पणधारियों के बीच सहमति के बनने पर निर्भर करती है।

क्षेत्र में स्थिति का अवलोकन करने पर और पिछले शांतिप्रयासों से प्राप्त सीख के आधार पर सुलझाव हेतु विश्वसनीय संवाद बनाने में नीचे लिखे सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय) सहायक होंगे।

(ए) मानव अधिकारों और कानून के शासन संबंधी सुधारों में गति लाना।

इसमें शेष सब पत्थर मारने वालों और राजनीतिक बंदियों की रिहाई शामिल है, जिन पर गंभीर आरोप नहीं हैं, जिन्होंने पहली बार अपराध किया है या छोटे–मोटे अपराध करने वाले हैं, उनके विरुद्ध प्रथम सूचना रपटों का वापिस लेना, उन आतंकवादियों को क्षमा करना जो हिंसा छोड़ने को तैयार हों और उनका पुनर्वास, हिंसा के शिकार सब लोगों का पुनर्वास, सुरक्षा बलों की राज्य के भीतरी क्षेत्रों में से उपस्थिति कम करना, आतंकवाद का मुकाबला करने के लिए बने विभिन्न अधिनियमों के कार्यान्वयन की लगातार समीक्षा और कश्मीरी पंडितों की वापसी सुनिश्चित करना, इसके साथ–साथ जम्मू और करगिल से बेघर हुए लोगों को उनके घरों में वापिस लाना जिससे वे सुरक्षा, सम्मान और मर्यादा का जीवन व्यतीत करें। पाकिस्तान नियंत्रित कश्मीर से आए लोगों को पर्याप्त मुआवज़ा देना और उनको राज्य के नागरिक के तौर पर मान्यता देना।

(बी) पीएसए (लोक सुरक्षा अधिनियम) का संशोधन और डी ए (डिस्ट्रिब्यूटेड एरिया) और एएफएसपीए (सशस्त्र सेना विशेष अधिकार अधिनियम) की समीक्षा

(सी) पुलिस और जनता के संबंधों में सुधार

(डी) सुरक्षा संस्थापनों के फैलाव को कुछ रणनीतिक स्थानों तक घटाकर और तत्काल कार्रवाई के लिए चल–इकाइयां बनाकर युक्तिसंगत बनाना

(ई) प्रधानमंत्री के कार्य समूह की जो कि विशेषतः सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय) पर था, सिफारिशों का त्वरित कार्यान्वयन सब कश्मीरियों, मुख्यतः पंडितों (हिन्दू अल्पसंख्यक) की राज्य नीति के भाग के तौर पर वापसी सुनिश्चित करना

राज्य में हिंसा के दौरान हुई विधवाओं और अनाथों के लिए जिनमें आतंकवादियों की विधवाएं और अनाथ शामिल होंगे, बेहतर सहायता और पुनर्वास

की व्यवस्था करना

नियंत्रण रेखा के आर–पार फँसे हुए कश्मीरियों की वापसी सुनिश्चित बनाना, जिनमें से बहुत से शस्त्रास्त्र के प्रशिक्षण के लिए बाहर चले गए थे किन्तु अब शांतिपूर्वक वापिस आना चाहते हैं,

(एफ) नियंत्रण–रेखा के आर–पार के संबंधों पर बने प्रधानमंत्री के कार्यदल की सिफारिशों का त्वरित कार्यान्वयन। इससे हल के लिए सहमति बनाने के प्रयत्नों में सहायता मिलेगी और इस कार्यान्वयन में नियंत्रण–रेखा के आर–पार के सब मार्गों को खोलना, बहु–प्रवेश परमिट/वीज़ा द्वारा व्यापार और यात्रा सुविधाजनक बनाना शामिल होना चाहिए।

(जी) अचिन्हित कब्रों की पहचान के लिए एक न्यायिक आयोग बनाया जाए जिसमें खो गए/लापता व्यक्तियों की पहचान पर जोर रहे। इन सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय) में से अधिकांश का आंशिक कार्यान्वयन हुआ है। बेहतर कार्यान्वयन के लिए इस समूह की सिफारिशों की सीबीएम (विश्वास स्थापन के उपाय) के प्रबोधन के लिए एक सशक्त समूह बनाया जाए।

संवाद प्रक्रिया

राजनीतिक संवाद के सिलसिले को आगे बढ़ाने के लिए समूह की निम्नलिखित सिफारिश हैं :–

(ए) जितना शीघ्र हो सके भारत सरकार और हुर्रियत के बीच संवाद आरंभ किया जाए। इस संवाद से प्रत्यक्ष परिणाम आने चाहिए और इसे अबाध बनाया जाए।

(बी) सीसी (सांविधानिक समिति) द्वारा तैयार की गई सिफारिशों और भारत सरकार – हुर्रियत के संवाद से उभरे बिन्दुओं पर संवाद के लिए पाकिस्तान और पाकिस्तान नियंत्रित जम्मू और कश्मीर को तैयार करना चाहिए।

(सी) नियंत्रण रेखा के दोनों तरफ जम्मू और कश्मीर के लिए सिविल सोसयटी के बीच संपर्क को बढ़ावा देने के लिए भारत और पाकिस्तान के बीच समझौता करना

10. नियंत्रण रेखा के आर–पार के संबंधों को सुसंगत बनाना

उन प्रतिनिधिमंडलों में से जिनसे हम मिले, अधिकांश का यह विश्वास है कि जब तक पूर्व शाही रियासत के उन भागों पर जो पाकिस्तानी प्रशासन के अधीन हैं, भी प्रस्तावित हल लागू न हो, तब तक कोई स्थायी या दीर्घकालीन हल

नहीं निकल सकता। यह स्थिति सन् 1994 के संसद् के उस प्रस्ताव के अनुकूल है जिसमें पूर्व शाही रियासत के पूरे भाग पर समझौते की अपेक्षा थी। पाकिस्तान नियंत्रित भागों का प्रशासन भारी रूप में बदला है। पाकिस्तान नियंत्रित जम्मू और कश्मीर फिलहाल दो भागों में बँटा है, जिनके राजनीतिक स्तर भिन्न–भिन्न हैं। राज्य की जन–सांख्यिकी उल्लेखनीय तौर पर बदली है जो कि पाकिस्तान के अन्य प्रान्तों से आए हुए लोगों के कारण हुई है।

केन्द्र–राज्य संबंधों को सुसंगत बनाने और क्षेत्रीय, राज्य और पंचायत / नगर–पालिका परिषद के स्तरों पर नियंत्रण रेखा के आर–पार शक्तियां देने की कोशिश को सुसंगत बनाने के लिए पाकिस्तान नियंत्रित जम्मू–कश्मीर में बड़े पैमाने पर सांविधानिक परिवर्तन आवश्यक होंगे। यदि इस पर सहमति हो जाए तो इससे विकास, संसाधन निर्माण और अन्य दुतरफा मामलों के लिए नियंत्रण रेखा के आर–पार संयुक्त संस्थानों को बनाने में इस सुसंगतिकरण से आसानी होगी। इसलिए इस समूह की सिफारिश है कि इन मामलों के बारे में चर्चा नियंत्रण रेखा के दूसरे तरफ के संबंधित प्रतिनिधियों से की जाए।

11. अंततः इस समूह की यह सिफारिश है कि हल की खोज को भारत–पाकिस्तान वार्ता पर अवलंबित न किया जाए। यदि जम्मू और कश्मीर में पणधारी समझौते के लिए सहमत हों तो पाकिस्तान के भी शामिल होने के लिए द्वार सदा खुले रखे जा सकते हैं।

जैसा कि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कहा है, प्रधान लक्ष्य है नियंत्रण रेखा को असंगत बनाना। यह सौहार्द और सहयोग का प्रतीक बन जाए।

वार्ताकारों की अनुशंसाओं का विश्लेषण

- **नियंत्रण रेखा और अंतर्राष्ट्रीय सीमा के आर–पार जनता, साजो–समान और सेवाओं की बाधा–रहित आवा–जाही तत्परता से सुनिश्चित की जाय। इसके लिये सीमा के दोनों ओर के प्रतिनिधियों की एक संयुक्त सलाहकार समिति एवं संयुक्त संस्थाएं बनें जो संयुक्त क्षेत्र के विकास की योजना बनायें।**

इसके लिये न केवल भारत के अलगाववादी समूहों बल्कि कथित आजाद जम्मू–कश्मीर सरकार, पाकिस्तान तथा चीन सरकार को वार्ता के लिये सहमत करना होगा। आज की स्थिति में यह कल्पना के घोड़े दौड़ाने से ज्यादा कुछ नहीं है।

उपरोक्त सुझाव का अर्थ यह भी है कि भारत "जम्मू–कश्मीर का मामला उसका निजी मामला है" की छः दशकों की अपनी नीति को छोड़ कर क्रमशः आजाद जम्मू–कश्मीर सरकार, पाकिस्तान और चीन की संप्रभुता स्वीकार कर अपना दावा छोड़ दे। वार्ताकारों ने अपनी रिपोर्ट में इसे सभी जगह पाक अधिक्रांत क्षेत्र(पीओके) के स्थान पर पाक प्रशासित क्षेत्र(पीएके) लिख कर पाकिस्तान की संप्रभुता को मान्यता भी दे दी है।

- **अखिल भारतीय सेवाओं से लिए जा रहे अधिकारियों का अनुपात धीरे–धीरे कम करते हुए राज्य की सिविल सेवा से लिए जाने वाले अधिकारियों की संख्या बढ़ाई जाए।**

देश के सभी राज्यों में 66 प्रतिशत प्रशासनिक अधिकारी केन्द्रीय सेवा से आते हैं तथा शेष सम्बंधित राज्य से लिये जाते हैं। जम्मू–कश्मीर में यह अनुपात पहले ही 50 प्रतिशत किया जा चुका है। इसे निरंतर कम करने की सिफारिश केन्द्रीय हस्तक्षेप को पूरी तरह समाप्त करने का प्रयास है। इसका अर्थ यह है कि केन्द्र केवल अनुदान देगा किन्तु केन्द्रीय अधिकारियों के अभाव में उसके वितरण में जवाबदेही नहीं तय कर सकेगा।

- **गवर्नर और मुख्यमंत्री पद के लिये उर्दू पर्यायवाची शब्दों का इस्तेमाल किए जाय जो क्रमशः सदरे–रियासत और वजीरे–आजम होता है।**

दूसरे शब्दों में यह 1952 के पहले की स्थिति बहाल करने का ही प्रयास है जिसके विरुद्ध स्व. श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने आंदोलन किया और बलिदान दिया।

- **राज्यपाल की नियुक्ति के लिये राज्य सरकार राष्ट्रपति को तीन नाम भेजेगी। राष्ट्रपति इनमें से किसी एक को राज्यपाल नियुक्त कर सकेंगे।**

संघीय संविधान के अनुसार राज्यपाल किसी राज्य में राष्ट्रपति का प्रतिनिधि होता है। राज्य सरकार द्वारा राज्यपाल का चयन न केवल संविधान विरुद्ध है अपितु राष्ट्रपति के अधिकारों को ही नकारने वाला है। जिसे नियुक्त करने अथवा बदलने का अधिकार राष्ट्रपति को नहीं है, ऐसा व्यक्ति राष्ट्रपति का प्रतिनिधि कैसे माना जा सकता है।

- **संसद राज्य के लिये कोई कानून तब तक नहीं बनायेगी जब तक कि देश की आंतरिक–वाह्य सुरक्षा अथवा महत्त्वपूर्ण आर्थिक हित प्रभावित न हो रहे हों।**

भारत का संविधान संसद को जम्मू–कश्मीर सहित किसी भी राज्य के लिये केन्द्रीय सूची के किसी भी विषय पर कानून बनाने तथा उसमें संशोधन करने के लिये अधिकृत करता है। संसद के इस अधिकार को चुनौती देने का हक संघ के किसी राज्य को नहीं है।

- **दक्षिण और मध्य एशिया के बीच जम्मू–कश्मीर एक सेतु है, यह स्थापित करने के लिये आवश्यक उचित उपाय किये जायें।**

यह टिप्पणी अत्यंत आपत्तिजनक है। जम्मू–कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है और इस रूप में वह मध्य एशिया के लिये भारत का द्वार है। इसे दो भू–भागों को जोड़ने वाला सेतु कह कर भारत से पृथक् उसकी सत्ता को स्थापित करने का प्रयास निंदनीय है।

- **सेना को आवासीय तथा कृषि क्षेत्रों से हटाया जाय तथा बैरक में वापस भेजा जाय। अशांत क्षेत्र(डीए) का दर्जा हटाया जाय, जनसुरक्षा अधिनियम (पीएसए) में संशोधन किया जाय तथा सशस्त्र बल विशेषाधिकार अधिनियम (अफस्पा) को वापस लिया जाय।**

सेना व सशस्त्र बलों के प्रयास, जिनमें पांच हजार से अधिक सैनिकों का बलिदान भी शामिल है, से राज्य की स्थितियों में सुधार दिखाई देने लगा है। यह शांति राज्य का स्थायी तत्व बन जाय, इससे पूर्व राजनैतिक कारणों से सेना को हटाने अथवा उसे विशेषाधिकार प्रदान करने वाले अधिनियमों को वापस लेना खतरनाक दांव है। छोटी सी चूक भी शांति की ओर बढ़ रहे राज्य को पुनः हिंसा के दौर में धकेल सकती है।

- **नियंत्रण रेखा के आर–पार सभी मार्गों को खोला जाय, व्यापार हेतु ही नहीं, अपितु नागरिक आवाजाही के लिये भी बहु–प्रवेश परमिट जारी किये जायें, सीमा के आर–पार रेल लाइनों और सड़क परियोजनाओं को पूरा करने में तेजी लायी जाय तथा नियंत्रण रेखा के दोनों ओर पर्यटन को बढ़ावा दिया जाय।**

व्यापार और पर्यटन के नाम पर सीमा के दोनों ओर मुक्त आवा–जाही होने पर पाकिस्तान प्रेरित आतंकवादियों के कश्मीर में प्रवेश का मार्ग सुगम हो जायेगा। करोड़ों की लागत से सीमा पर लगायी गयी बाड़ का प्रयोजन ही समाप्त हो जायेगा। साथ ही सीमा पार से प्रवेश कर आतंकी बेरोक–टोक जम्मू होते हुए पंजाब तथा देश के शेष भागों में जा सकते हैं।

- **जितना शीघ्र हो सके भारत सरकार और हुर्रियत के बीच संवाद आरंभ किया जाए और इसे अबाधित रखा जाए। भारत सरकार–हुर्रियत के संवाद से उभरे बिन्दुओं पर संवाद के लिए पाकिस्तान और पाकिस्तान नियंत्रित जम्मू और कश्मीर सरकार को तैयार करना चाहिए।**

जिस हुर्रियत ने वार्ताकारों से मिलना भी स्वीकार नहीं किया उनके साथ भारत सरकार की वार्ता शुरू करने का सुझाव ही निरर्थक है। इसी प्रकार, पाकिस्तान को वार्ता में शामिल करने का अर्थ भारत सरकार द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ सहित तमाम अंतरराष्ट्रीय मंचों पर लिये गये अपने पक्ष से विचलित होना है जबकि उसकी ओर से आज भी अवैध कब्जे को खाली करने का कोई संकेत नहीं दिया गया है।

- **पत्थर मारने वालों और राजनीतिक बंदियों को रिहा किया जाय, जो आतंकवादी हिंसा छोड़ने को तैयार हों उन्हें क्षमा किया जाय, हथियार चलाने का प्रशिक्षण लेने नियंत्रण रेखा के पार गये कश्मीरियों की वापसी सुनिश्चित हो तथा उक्त सभी का पुनर्वास किया जाय।**

यह सुझाव वार्ताकारों के अपने सुझाव नहीं हैं। अलगाववादी हुर्रियत कांफ्रेंस के विभिन्न धड़ों द्वारा की गयी उक्त मांगों को वार्ताकारों ने ज्यों–का–त्यों अपनी सिफारिशों में रख दिया है।

जटिल मिश्रण की पुड़िया

वार्ताकारों ने अपनी रिपोर्ट में कश्मीर की स्थिति का वर्णन 'आकांक्षाओं का जटिल मिश्रण' के रूप में किया है। विज्ञान की भाषा में जटिल मिश्रण में ऐसे अनेक तत्व होते हैं जो आपस में एक–दूसरे के परमाणुओं के साथ बंध बना लेते हैं, नये यौगिकों का निर्माण करते हैं। इन यौगिकों को भी साथ रखने पर यदि उनमें बंध बनना संभव होता है तो वे पुनः एक नया यौगिक बना लेते हैं किन्तु ऐसे यौगिक, जिनको आपस में मिलाये जाने पर भी कोई बंध नहीं बन सकता, जब मिला दिये जाते है तब उसे मिश्रण कहते हैं। किसी दिये हुए मिश्रण में से उसके मूलतत्वों की पहचान अवश्य जटिल होती है किन्तु यदि उनकी सही पहचान किये बिना प्रयोग शुरू कर दिये गये तो परिणाम विध्वंसकारी हो सकता है। कश्मीर के मामले में दशकों से यही हो रहा है।

वार्ताकारों ने भी 'जटिल मिश्रण' के तत्वों की पहचान के लिये वैज्ञानिक पद्धति का पालन करने और तथ्यों और तर्कों के आधार पर उसकी पुष्टि करने के स्थान पर सुनी–सुनाई बातों के आधार पर यह रिपोर्ट तैयार कर दी है। इसकी तुलना मनोरंजक रूप से हाईस्कूल के उन विद्यार्थियों से की जा सकती है जो रसायन विज्ञान की प्रायोगिक परीक्षा के समय लैब असिस्टेंट को दस–बीस रुपये थमा कर यह पूछ लेते हैं कि उसकी पुड़िया में मौजूद मिश्रण में कौन–कौन से तत्व मिलाये गये हैं। पैसे लेकर वह तत्वों के नाम बता देता है और विद्यार्थी उस तत्व की बिना जांच किये पहले से रटा फार्मूला उत्तरपुस्तिका पर उतार देते है। तटस्थता के नाम पर बाहर से पधारे परदेसी परीक्षक को आगरे का पेठा या बरेली का सुरमा भेंट कर 'पप्पू' पास हो जाता है।

'पप्पू' के पापा से लेकर परीक्षक तक, किसी को सटीक वैज्ञानिक विष्लेषण और तत्वों की पहचान की चिन्ता नहीं है। पप्पू के पास होने का अर्थ यह नहीं है कि प्रयोग ठीक से किया गया, विष्लेषण वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया, तत्वों की ठीक पहचान हुई, परीक्षक ने ठीक मूल्यांकन किया आदि। पप्पू के पास होने का रहस्य इस बात में है कि सभी संबंधित पक्षों को लगा कि जो वह चाहते थे वह पूरा हो गया।

वार्ताकारों द्वारा एक साल की मशक्कत और जम्मू–कश्मीर के 22 जिलों की खाक छानने के बाद (हालांकि रिपोर्ट देखने के बाद लगता है कि इसकी कोई जरूरत नहीं थी क्योंकि इस रिपोर्ट का बड़ा हिस्सा तो समूह के गठन से पहले ही गृह मंत्रालय की फाइलों में मौजूद था) जो रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी है उससे अधिकांश पक्ष संतुष्ट हैं।

नेशनल कांफ्रेस की स्वायत्तता के महत्वपूर्ण बिन्दु रिपोर्ट में शामिल हैं तो

पीडीपी की सेल्फ रूल की मांग भी जोड़ी गयी है। हुर्रियत के वहिष्कार के बाद भी उसके दोनों धड़ों की मांगें रिपोर्ट में जगह पा गयी हैं। यही नहीं, दोनों ओर के कश्मीर को जोड़ कर किसी निर्णय तक पहुंचने की अमेरिका में बसे आईएसआई एजेंट डॉ गुलाम नबी फई की मांग को भी वार्ताकारों ने संबोधित किया है तो पाकिस्तान द्वारा स्वयं को बात–चीत में पक्षकार बनाये जाने की संस्तुति भी की गयी है। पूरे कश्मीर को जोड़कर भारत–पाकिस्तान के बीच एक बफ़र स्टेट बनाने का अमेरिकी एजेंण्डा भी सिफारिशों की शक्ल में सामने आया है। एक–दूसरे की संप्रभुता को मान्य करने का संकेत चीन के कब्ज वाले कश्मीर के भू–भाग को वापस लेने की मांग को भी सदा के लिये समाप्त कर देता है।

कुछ पक्ष ऐसे भी हैं जो इस रिपोर्ट से प्रसन्न नहीं हैं। राज्य के गुज्जर, शिया, पहाड़ी, राष्ट्रवादी मुसलमान, कश्मीरी सिख, कश्मीरी पंडित, लद्दाख के निवासी, शरणार्थी समूह, डोगरे तथा बौद्ध, देश भर में फैले राष्ट्रवादी संगठन व राजनैतिक दल रिपोर्ट में की गयी अनुशंसाओं का विरोध कर रहे हैं। लेकिन वार्ताकार और उन्हें नियुक्त करने वाली सरकार जानती है कि वे चिर विरोधी हैं इसलिये जम्मू–कश्मीर के संबंध में होने वाले किसी भी ऐसे समझौते का विरोध करेंगे जो जम्मू–कश्मीर के भारत के साथ विलय को कमजोर करते हों। लेकिन ये यह भी जानते हैं कि रणनीतिपूर्वक, धीमे–धीमे वे इस मुद्दे को इतना कमजोर कर चुके हैं कि तीन पीढ़ियां बीतने के बाद अब उनके नियुक्त वार्ताकार यदि जम्मू–कश्मीर को भारत से अलग करने की भूमिका बनाने वाली रिपोर्ट भी दें तो आम आदमी उद्वेलित नहीं होता।

अंतर्राष्ट्रीय रणनीतिकारों ने इस समय की प्रतीक्षा में दशकों बिताये हैं। अब जाकर वह समय आया है जिसकी उन्हें प्रतीक्षा थी। माउंटबेटन ने जो विष–बीज बोया था, उसकी फसल काटने का अवसर अब सामने है। जम्मू–कश्मीर को भारत से अलग कर समरनैतिक दृष्टि से देश को अपाहिज बना देने का पश्चिमी मंसूबा अब आकार लेना चाहता है। दुनियां में भारत के महाशक्ति बनने की संभावना से भयभीत सभी देश और समुदाय इस दुरभिसंधि में शामिल हैं।

इतिहास साक्षी है कि बिना जयचंदों की सहायता के न तो पृथ्वीराज हारता और न सिराजुद्दौला। माउंटबेटन और उनके उत्तराधिकारियों को अपना एजेंडा पूरा करने के लिये जो स्थानीय सहयोग और वातावरण चाहिये था वह न मिलने के कारण जो काम तब न हो सका, अब होने की परिस्थितियां बनती जा रही हैं, ऐसा भ्रम पश्चिमी रणनीतिकारों को ही नहीं, उनकी भारतीय कठपुतलियों को भी हो गया है। वे यह भूल गये हैं कि जिस जनता को वे रुपये, साड़ी और शराब की बोतल के बदले वोट बेचने वाली मूर्खों की जमात मानते हैं, राष्ट्रीय आह्वान पर वही जनता जब हुंकार भरती है तो सत्ता धूल चाटती नजर आती है।

जटिल मिश्रण के तत्व

वार्ताकारों ने जटिल मिश्रण की चर्चा कर जिन तत्वों की पहचान का दावा किया, वस्तुतः वह एक मरीचिका है जिसे पिछले छः दशकों में राज्य व केन्द के स्वार्थप्रेरित राजनेताओं ने गढ़ा है। गॉयबल्स के सिद्धांत के अनुसार इस झूठ को इतनी बार और इतनी तरह से कहा गया है कि वह सत्य का आभास देने लगा है। वार्ताकारों ने संभवतः इस आभास को ही सत्य मानते हुए तथ्यों की अनदेखी की। परिणामस्वरूप, उनकी तैयार की गयी रिपोर्ट विसंगतियों का पुलिंदा भर रह गयी है।

जरूरत इस बात की थी कि उपलब्ध तथ्यों का तर्कों के आधार पर वैज्ञानिक व वैधानिक दृष्टि से विष्लेषण किया जाता तथा उसके बाद उसका राजनैतिक हल खोजा जाता। इसके विपरीत सरकार के निर्देश पर वार्ताकारों ने तथ्यों की वैधानिकता और वैज्ञानकता में न जाकर राजनैतिक विष्लेषण करने का प्रयास किया। यदि सरकार की इच्छा राजनैतिक विष्लेषण की थी तो उसे गैर–राजनैतिक लोगों के समूह के गठन की आवश्यकता नहीं थी। और यदि गैर–राजनैतिक लोगों को ही आगे करना था तो उन्हें तथ्यों का ईमानदार विष्लेषण करने देना था। बाद में उसकी व्यावहारिक राजनैतिक संभावनाओं को खंगाला जा सकता था।

यद्यपि ईमानदार प्रयास की संभावनाओं पर प्रश्नचिन्ह तभी लग गया था जब सरकार ने वार्ताकारों के समूह का गठन किया। इसके दो विशेष कारण थे। पहला, तीन में से दो वार्ताकारों के विचार पहले से जम्मू–कश्मीर के संबंध में अलगाववादियों से मेल खाते थे। इसे वे समय–समय पर जाहिर भी करते रहे थे। गृह मंत्रालय को इसकी जानकारी न होने का सवाल ही नहीं था। इसके बावजूद उन्हें समूह में रखे जाने का सीधा अर्थ यही था कि सरकार अलगाववादी मांगों को संतुष्ट करने वाली रिपोर्ट तैयार करवाना चाहती है। सरकार जैसी रिपोर्ट चाहती है वैसे ही विचार और समझ वाले लोगों को समिति में रखती है।

समस्या का दूसरा पहलू यह है कि अधिकांश राजनेता, नौकरशाह, बुद्धिजीवी और पत्रकार उन कहानियों से प्रभावित ही नहीं हैं बल्कि उन पर विश्वास करने लगे हैं जिन्हें तथ्यों से छेड़–छाड़ कर गढ़ा गया है। जब तक इन भ्रांतियों से बाहर आकर केवल आधिकारिक दस्तावेजों को आधार बनाकर अध्ययन और विष्लेषण नहीं किया जायेगा तब तक जम्मू–कश्मीर की समस्या हल होने वाली नहीं है।

जटिल मिश्रण की इस पुड़िया में जो तत्व मौजूद हैं उन पर नजर ड़ालना उपयोगी होगा। इन तत्वों की ओर वार्ताकारों का ध्यान समय रहते ही आकर्षित

किया गया था किन्तु इन तथ्यों पर विचार करना संभवतः उनकी कार्यसूची में ही नहीं था। चिंतनशील पाठकों के सम्मुख इन तथ्यों को प्रस्तुत करने का आशय है कि वार्ताकारों द्वारा उपेक्षित छोड़ दिये गये इन तत्वों पर भी देश में बहस उत्पन्न हो सके।

तत्व -1

भ्रांतियां

जम्मू–कश्मीर और उसके विलय के बारे में देश में, यहां तक कि बुद्धिजीवी वर्ग में भी अनेक भ्रांत धारणाएं विद्यमान हैं। केन्द्र व राज्य की सरकारों ने तथ्यों को स्पष्ट करने के स्थान पर उस पर आवरण डालने का ही काम किया है। इसके चलते जहां संबंधित राजनेताओं और नौकरशाही ने अपने निजी स्वार्थ पूरे किये वहीं देश को अंधेरे में रखने के लिये इस आवरण का उपयोग किया। परिणामस्वरूप, विलय के पश्चात कश्मीर व शेष देश के बीच जो एकीकरण की प्रक्रिया चलनी चाहिये थी, छः दशक बाद भी उसका अभाव अनुभव होता है।

पहली धारणा है कि जम्मू–कश्मीर एक अद्वितीय राज्य है जो भारत के अन्य राज्यों से अलग है। इसका इतिहास और भूगोल अलग है। इसकी समस्याएं तक विशिष्ट हैं और जब समस्या विशिष्ट है तो समाधान भी विशिष्ट ही होगा (गृहमंत्री चिदम्बरम की टिप्पणी)।

यह सत्य है कि देश का प्रत्येक राज्य अपने–आप में अद्वितीय है, इसी आधार पर जम्मू–कश्मीर भी अद्वितीय है। यही स्थिति इतिहास और भूगोल की है। किन्तु यह सर्वस्वीकृत तथ्य है कि भारत विविधताओं का देश है। इस विविधता के उपरान्त भी पूरे देश में एक सांस्कृतिक एकता विद्यमान है जो पूरे देश को एकता के सूत्र में बांधे रखती है।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि भारतीय संस्कृति की जड़ें कश्मीर से निकली हैं। महर्षि कश्यप की विरासत संभाले यह क्षेत्र शताब्दियों से ऋषि–मुनियों को ज्ञान की साधना के लिये आमंत्रित कर रहा है। शारदा पीठ, माँ मंगला तीर्थ, नुंद ऋषि तथा शंकराचार्य से जुड़े स्थल, अमरनाथ और वैष्णो देवी तीर्थ आदि जम्मू–कश्मीर को शेष भारत से जोड़ते हैं।

रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, न्याय, सुरक्षा, सम्मान आदि की सहज उपलब्धता शेष देश के समान ही जम्मू–कश्मीर के लोग भी चाहते हैं। इन सबकी उपलब्धता में कमी ही समस्या है और इसका हल देश के साथ संवाद और समरसता में निहित है। यह कोई विशिष्ट समस्या नहीं, इस संदर्भ में पूरे देश

का चित्र प्रायः एक जैसा है। यदि यह मुकाबले में कुछ अधिक है तो भी इसके पीछे कारण है अनुच्छेद 370 और इसके चलते सत्ता और प्रशासन के विकेन्द्रीकरण में उत्पन्न अवरोध। अतः विशिष्ट समाधान की मरीचिका त्याग कर सहज समाधान की ओर बढ़ना ही प्रासंगिक है।

दूसरी बड़ी भ्रांति है कि जम्मू–कश्मीर का अर्थ है कश्मीर और कश्मीर का अर्थ है श्रीनगर घाटी। घाटी की आवाज ही पूरे राज्य की आवाज है जिसका प्रतिनिधित्व अब्दुल्ला परिवार की पार्टी नेशनल कांफ्रेस, मुफ्ती परिवार की पार्टी पीपल्स डेमोक्रेटिक पार्टी तथा तमाम अलगाववादियों के गुटों में बंटी हुर्रियत करती है।

यह धारणा भी पूरी तरह भ्रम पर आधारित है। दो लाख 22 हजार वर्ग किलोमीटर से अधिक क्षेत्रफल वाले जम्मू–कश्मीर राज्य का 1 लाख 1 हजार वर्ग किलोमीटर से अधिक क्षेत्र भारत के साथ है। इसमें 16 हजार किमी से भी कम क्षेत्रफल वर्तमान कश्मीर का है। इसके भी आधे से कम हिस्से में अलगाववादी शक्तियां अपना प्रभाव रखती है। राज्य की जनसंख्या का बड़ा हिस्सा अलगाववादी आंदोलनों का समर्थक नहीं बल्कि उसका शिकार है।

तीसरी भ्रांति है जम्मू–कश्मीर के मुस्लिम चरित्र को लेकर। तथ्य यह है कि जितनी मुस्लिम जनसंख्या जम्मू–कश्मीर में है उससे कई गुना अधिक भारत के अनेक राज्यों में अपने नागरिक अधिकारों का उपभोग करते हुए स्वतंत्रतापूर्वक रह रही है।

चौथी भ्रांति कश्मीरियत और कश्मीरी पहचान की है। मुट्ठी भर यहूदी, पारसी और एंग्लो–इंडियन जैसे अनेक समुदायों के लोग अपनी आस्थाओं का पालन करते हुए तथा अपनी पहचान को सुरक्षित रखते हुए खुशहाली के साथ रह सकते हैं तो कश्मीरी मुसलमान क्यों नहीं रह सकते।

समस्या कश्मीरियत या मुस्लिम पहचान की नहीं है। लाखों कश्मीरी मुस्लिम समाज के लोग देश को अनेक राज्यों में रहते हैं और कभी उन्हें पहचान का संकट नहीं हुआ। किन्तु इस तथ्य से उन्हें परिचित कराने और देश के साथ उनकी एकात्मता को पुष्ट करने के स्थान पर भय का एक छद्म आवरण बना कर उन्हें शेष देश से काट कर रखा गया।

पांचवी भ्रांति है कि भारत संघ में जम्मू–कश्मीर राज्य का विलय सशर्त था। जबकि यह पूरी तरह असत्य है। भारतीय स्वातंत्र्य अधिनियम –1947 के अनुसार जम्मू–कश्मीर के महाराजा हरिसिंह एकमात्र व्यक्ति थे जो अपने राज्य के भारत अथवा पाकिस्तान में विलय का निर्णय करने के लिये अधिकृत थे।

26 अक्तूबर 1947 को उन्होंने भारत में विलय का निर्णय करते हुए विलय पत्र पर हस्ताक्षर किये जिसे तत्कालीन गृहमंत्रालय द्वारा तैयार किया गया था।

यह वही विलय पत्र था जिस पर शेष 568 रियासतों ने हस्ताक्षर किये थे। अधिनियम में सशर्त विलय का कोई प्रावधान ही नहीं था इसलिये विलय की पूर्व शर्तें होने का कोई कारण ही नहीं है।

27 अक्तूबर को गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन ने उस पर स्वीकृति के हस्ताक्षर किये। इसके साथ ही विलय की प्रक्रिया पूरी हो गयी। इस पर आगे किसी बहस की कोई गुंजाइश नहीं है।

छठी भ्रांति है कि अनुच्छेद 370 राज्य को किसी प्रकार की स्वायत्तता या विशेषाधिकार प्रदान करता है अथवा केन्द्र व राज्य के बीच संबंधों का निर्धारक है तथा इसे समाप्त करने से राज्य के हितों को नुकसान पहुंचेगा।

जबकि सत्य यह है कि अनुच्छेद 370 केवल एक प्रक्रियात्मक तंत्र है जो राज्य को किसी प्रकार की स्वायत्तता नहीं देता। साथ ही, इस तंत्र का उपयोग कर जो कानून जम्मू–कश्मीर में लागू किये गये हैं वे शेष भारत में भी लागू हैं। यदि वे 120 करोड़ भारतीयों के हित में हैं तो जम्मू–कश्मीर के 1 करोड़ 20 लाख नागरिकों के हितों के विरुद्ध कैसे हो सकते हैं।

यह भारतीय संविधान का एकमात्र अनुच्छेद है जिसे संविधान निर्माताओं ने सीमित समय के लिये जोड़ा था। स्वयं शेख अब्दुल्ला संविधान सभा के सदस्य थे और उन्होंने भी इस प्रावधान पर सहमति जताते हुए हस्ताक्षर किये।

पं जवाहरलाल नेहरू, जिनकी अनुच्छेद 370 (पूर्ववर्ती अनुच्छेद 306 ए) को संविधान में जोड़े जाने में महत्वपूर्ण भूमिका थी, ने भी 1963 में संसद में कहा कि यह तो अस्थायी प्रावधान है और यह घिसते–घिसते घिस जायेगा। दिसम्बर 1964 में स्व. प्रकाशवीर शास्त्री के प्रस्ताव पर हुई चर्चा में सम्पूर्ण सदन ने अनुच्छेद 370 की समाप्ति पर सहमति व्यक्त की थी। स्वयं लोकसभाध्यक्ष ने सदन की इच्छा का ध्यान रखते हुए शीघ्र ही सरकार द्वारा तत्संबंधी विधेयक लाने की बात कही थी। लेकिन जल्दी ही पाकिस्तान से युद्ध छिड़ जाने के कारण इस प्रस्ताव का क्रियान्वयन न हो सका।

अनुच्छेद 370 की समाप्ति से कोई हानि होने की संभावना नही है। इसके विपरीत यदि यह हटता है तो भारत का संविधान पूरी तरह राज्य में लागू हो सकेगा। परिणामस्वरूप, पूरे देश के नागरिक जिन सुविधाओं व अधिकारों का लाभ ले रहे हैं वे जम्मू–कश्मीर के नागरिकों को भी प्राप्त हो सकेंगे। प्रभावी सूचना के अधिकार कानून, पंचायती राज, पिछड़ों और जनजातियों को मिलने वाला आरक्षण का लाभ राज्य के नागरिक भी उठा सकेंगे।

सातवीं भ्रांति है कि जम्मू–कश्मीर भारत व पाकिस्तान के बीच का विवाद है। यह भ्रांति भी निराधार है क्योंकि महाराजा ने इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट 1947 के प्रावधानों के अनुरूप राज्य का भारत में विलय किया था। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी

पाकिस्तान को आक्रमणकारी मानते हुए उसे अपनी सेना हटाने के निर्देश दिये थे जिसका पालन उसने आज तक नहीं किया।

जम्मू–कश्मीर की जो भी समस्या है वह भारतीय संघ में राज्य के विलय को लेकर नहीं है। यहां तक कि शेख अब्दुल्ला भी पाकिस्तान में विलय के लिये किसी भी कीमत पर तैयार नहीं थे। न ही वे द्विराष्ट्रवाद के सिद्धांत के समर्थक थे जिसे आधार बना कर पाकिस्तान का निर्माण हुआ। इसलिये समस्या का जो भी समाधान निकलेगा वह भारतीय संविधान के अंतर्गत परस्पर सहमति के आधार पर।

1994 के संसद के सर्वसम्मत प्रस्ताव से भी स्पष्ट है कि इस पूरे प्रकरण में पाकिस्तान द्वारा अधिक्रांत भूमि को मुक्त कराने के अतिरिक्त उसकी कोई भूमिका नहीं है।

तत्व – 2

तुष्टिकरण की नीति

द्विराष्ट्रवाद का सिद्धांत पाकिस्तान की मांग के साथ भारत के मुस्लिम समाज के बीच लोकप्रिय हुआ। किन्तु इसके बीज काफी पहले बोये गये थे जब कांग्रेस ने यह मन ही मन मान लिया था कि देश का मुस्लिम समाज एक भारतीय के रूप में आजादी के आंदोलन में नहीं जुड़ेगा। एक पृथक समुदाय के रूप में संबोधित करते हुए उसे अच्छा लगने वाला कुछ दिया जाय तभी उसकी सहानुभूति अर्जित की जा सकती है।

परिणामस्वरूप, कांग्रेस ने खिलाफत आंदोलन छेड़ा जिसका भारत से प्रत्यक्ष कोई संबंध न था। इसके बाद से कांग्रेस ने मुस्लिम तुष्टीकरण को एक सिद्धांत की तरह अपना लिया। देश के स्वतंत्र होने के बाद भी मुस्लिम तुष्टीकरण की यह नीति जारी रही। प्रत्येक मुस्लिम को स्वतंत्र भारत के कर्तव्यपरायण नागरिक के रूप में मुख्यधारा से जोड़ने के बजाय वोट के ठेकेदार कुछ नेताओं और धर्मगुरुओं के माध्यम से पूरे समुदाय को संबोधित किया जाता रहा। यह नीति आज भी जारी है। कालान्तर में इस अप्रत्यक्ष व्यवस्था में ही कुछ लोगों के स्वार्थ पनपने लगे। उन्होंने एक समुदाय के रूप में देश के दूसरे सबसे बड़े वर्ग को अल्पसंख्यक कहकर न केवल संबोधित किया बल्कि ऐसी मानसिकता में पहुंचा दिया जहां मान लिया गया कि यदि कुछ चाहिये तो अल्पसंख्यक पहचान को भुनाना आवश्यक है।

कश्मीर इस विद्रूप का ज्वलंत उदाहरण है। जिस प्रकार देश की सभी

रियासतों का भारतीय संघ में विलय हुआ, वैसा ही विलय जम्मू–कश्मीर का भी हुआ। किन्तु सीमावर्ती राज्य के रूप में समग्र रूप से उसके विकास की योजना बनाने के स्थान पर कश्मीर घाटी के मुस्लिम समुदाय को कुछ अतिरिक्त सुविधाएं देकर शेष राज्य को उपेक्षित किया गया। नतीजा यह हुआ कि राज्य में एक सामाजिक–आर्थिक असंतुलन उत्पन्न हो गया जिसने अन्य जटिलताएं पैदा कीं।

तुष्टिकरण की इस नीति ने ही कश्मीर में अलग निशान, अलग विधान और अलग प्रधान की अनुमति दी, इसी के चलते अनुच्छेद 370 जैसी व्यवस्था को संविधान में जोड़ा गया। इसी के कारण कश्मीर केन्द्रित नीतियां बनीं। इसी के कारण वहां भारत का संविधान लागू नहीं किया गया। कश्मीरी पंडितों का विस्थापन, राष्ट्रवादी स्वर को कुचलना, हिन्दुओं, सिखों और बौद्धों ही नहीं बल्कि शियाओं, गूजर व बकरवाल मुस्लिमों को भी विकास के अवसरों से वंचित रखने जैसी परिस्थितियां भी इस तुष्टिकरण की नीति की ही देन हैं।

तत्व - 3

भ्रष्टाचार का मकड़जाल

रिपोर्ट के अनुसार राज्य पूरी तरह केन्द्र सरकार द्वारा दिये गये अनुदान पर निर्भर है। केन्द्र सरकार द्वारा चलायी जा रही फ्लैगशिप योजनाओं के नाम पर भी बड़ी धन राशि राज्य को भेजी जाती है। किन्तु इन योजनाओं का क्रियान्वयन भी संतोषजनक नहीं है।

समय–समय पर केन्द्र द्वारा विशेष पैकेज भी राज्य को दिये जाते रहे हैं। प्रधानमंत्री पुनर्निर्माण योजना के अंतर्गत ही वर्ष 2004 से अभी तक 32 हजार करोड़ रुपये दिये गये हैं किन्तु इसका एक तिहाई भी खर्च नहीं हो सका है। केवल डल झील की सफाई के लिये ही अब तक करोड़ों रुपये दिये जा चुके हैं किन्तु स्थिति जस की तस है।

इसका मुख्य कारण है राज्य की व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में फैला व्यापक भ्रष्टाचार। अनुच्छेद 370 की इस भ्रष्टाचार के पनपने और जारी रहने में महत्वपूर्ण भूमिका है। साथ ही केन्द्रीय लेखा परीक्षक कार्यालय के राज्य में विस्तार न होने के कारण उसके खातों की जांच करना संभव नहीं।

आतंकवाद से निपटने के नाम पर बड़ी मात्रा में विवेकाधीन राशि भी खर्च होती है जिसका हिसाब–किताब कहीं नहीं होता। भ्रष्टाचार अबाधित गति से चलता रहता है और इसके मकड़जाल में उलझा सामान्य कश्मीरी नागरिक भविष्य के प्रति सदैव आशंकित रहता है।

तत्व - 4

जेहादी इस्लाम

विश्व भर में जारी सभ्यता के संघर्ष ने अपनी बाजुएं कश्मीर तक पसार दी हैं। अथवा यह भी कह सकते हैं कि मूल रूप ईसाइयत और इस्लाम के बीच चलने वाले इस वैश्विक संघर्ष को कश्मीर की अलगाववादी शक्तियां अपने पक्ष में भुनाने की कोशिश में हैं।

पाकिस्तान और इसकी कुख्यात खुफिया एजेंसी आईएसआई भारत के विरुद्ध जारी अपने छद्म युद्ध को ताकत देने के लिये जम्मू–कश्मीर को इस्लामी अस्मिता से जोड़ रही है। हालांकि इस क्षेत्र में जेहाद का इतिहास लगभग दो सौ वर्ष पुराना है। जब कश्मीर महाराजा रणजीत सिंह के राज्य का हिस्सा बना तो उसके खिलाफ जेहाद की अपील पर न केवल पंजाब और कश्मीर बल्कि उत्तर प्रदेश और बिहार से भी जेहादी जुटे थे।

किन्तु वर्तमान संदर्भ में लोकतंत्र के आधार पर अपनी चुनी हुई सरकार के संरक्षण में रह रही जनता का जीवन आर्थिक–सामाजिक सुधारों के द्वारा ही खुशहाल बनाया जा सकता है न कि जेहाद के भरोसे। कश्मीरी अलगाववादियों के पक्ष को यदि स्वीकार भी हो गया तो भी कश्मीर एक स्वायत्त राज्य के रूप में होगा। ऐसी स्थिति में सूडान और सीरिया जैसे देशों से आये आतंकी किसलिये वहां अपनी जान देने के लिये आ रहे हैं? जाहिर है वे वैश्विक जेहाद के नारे से ही प्रेरित होकर यहां आते हैं।

इसके अतिरिक्त कश्मीर की आजादी के लिये होने वाले आंदोलन के दौरान कश्मीर के झण्डे की जगह इस्लाम का हरा झण्डा फहराने और निजामे–मुस्तफा के नारे यह साबित करते हैं कि कश्मीर की आजादी की मांग के पीछे वैश्विक जेहाद का मंसूबा भी पनप रहा है। वार्ताकारों ने अपनी रिपोर्ट में विदेशी आतंकवादियों के लिप्त होने पर एक शब्द भी नहीं कहा किन्तु यदि इसे सही परिप्रेक्ष्य में नहीं लिया गया तो इस चुप्पी की मंहगी कीमत चुकानी पड़ेगी।

तत्व - 5

अनिर्णय का शिकार नेतृत्व

जम्मू–कश्मीर की समस्या ने भयावह रूप धारण किया है। एक लाख से ज्यादा लोगों की जान इस बीच जा चुकी है जिसमें हजारों सुरक्षाकर्मी शामिल है।

निर्दोष नागरिकों की तीन पीढ़ियां असुरक्षित वर्तमान और अनिश्चित भविष्य से जूझते हुए जीने को अभिशप्त रहीं हैं। इसका सबसे अधिक जिम्मेदार कोई पहलू है तो वह है अनिर्णय का शिकार केन्द्रीय नेतृत्व।

गत छः दशकों में भारत सरकार की ओर से केवल तुष्टिकरण की नीति अपनायी गयी। समितियों, आयोगों, वार्ताकारो, अध्ययन दलों के नाम पर समय खरीदने की कोशिश होती रही। दर्जनों रिपोर्ट सरकारी फाइलों में धूल चाट रही हैं। अलगाववादियों के सामने नतमस्तक होकर और वहां की सरकारों की मांग पर तरह–तरह के पैकेज जारी कर समय तो काटा गया किन्तु न तो वहां के लोगों को मुख्य धारा से जोड़ने के लिये कोई प्रभावी प्रयास किये गये और न ही कोई कड़े कदम उठाये गये। नतीजा यह है कि समस्या जस की तस है।

नेतृत्व के द्वारा निर्णय से बचने की इस प्रवृत्ति ने ही इस छोटे घाव को नासूर बना दिया है। 2010 में आंदोलन के नाम पर हुई पत्थरबाजी में हजारों सुरक्षाकर्मियों के घायल होने के बाद भी सरकार ने निर्णायक कदम उठाने के बजाय एक और वार्ताकारों के दल का गठन कर दिया। उसकी रिपोर्ट को लेकर भी कोई ठोस निर्णय नहीं हो सका है। कारण स्पष्ट है। सरकार इस रिपोर्ट को लागू करने के बजाय चाहती है कि इसका विरोध हो और वह इसे ठंडे बस्ते में डाल सके। इसीलिये गृह मंत्रालय इसे संसद में प्रस्तुत करने बजाय देश को इस पर बहस करने के लिये कहता है।

हालत यह है कि समस्या बढ़ती जा रही है और सरकार समाधान की ओर से मुंह फेर कर समय काटने का करतब दिखा रही है।

तत्व - 6

अंतरराष्ट्रीय षड्यंत्र

जम्मू–कश्मीर को भारत से अलग करने का षड्यंत्र स्वतंत्रता से पहले ही प्रारंभ हो गया था। माउंटबेटन इस मुद्दे को अधिक से अधिक पेचीदा बनाने की कोशिश करते रहे। महाराजा द्वारा विलय पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये जाने के बाद भी उन्होंने एक पत्र लिख कर जनमत संग्रह का पेच डाल दिया जबकि इसके पक्ष में न शेख अब्दुल्ला थे और न ही जिन्ना।

कबायली आक्रमण के पश्चात भी माउंट बेटन कश्मीर की सहायता के लिये सेना और गोला–बारूद भेजने में आनाकानी करते रहे जबकि महाराज लगातार उनसे निवेदन कर रहे थे। यहां तक कि महाराज ने उन्हें सेना के लिये गोला–बारूद की कीमत तक देने का प्रस्ताव रखा था।

अलगाववाद की समस्या अवश्य जम्मू–कश्मीर राज्य में है किन्तु यह समस्या जम्मू–कश्मीर की नहीं है। वस्तुस्थिति का विश्लेषण करें तो पायेंगे कि राज्य में सक्रिय अलगाववादी और आतंकवादी तो सिर्फ मोहरे भर हैं। चालें कहीं और से चली जा रही हैं, दांव कोई और लगा रहा है।

सामरिक महत्व के कारण कश्मीर का एक बड़ा भू–भाग निगलने के बाद भी चीन की पिपासा शांत नहीं हुई है। वह गिलगित भी लेना चाहता है। अमेरिका भी कश्मीर पर प्रत्यक्ष हस्तक्षेप से इनकार करता है किन्तु पाकिस्तान की जम्मू–कश्मीर में चल रही गतिविधियों को मौन समर्थन देता है। उसकी इच्छा कश्मीर को विवादित बनाये रखने अथवा भारत और पाकिस्तान के बीच एक बफर स्टेट के रूप में देखने की है। कूटनीतिक रूप से यही उसके अनुकूल है। कश्मीर में अगर उसे घुसने का मौका मिलता है तो वह चीन सहित मध्य एशिया और भारत सहित दक्षेस के देशों पर निगरानी बनाये रख सकता है।

तत्व – 7

भूलों का स्मारक

जम्मू–कश्मीर की समस्या वस्तुतः पं जवाहर लाल नेहरू द्वारा की गयी भूलों का स्मारक है। राष्ट्रवादी महाराजा हरिसिंह के विरुद्ध शेख अब्दुल्ला को खड़ा कर उन्होंने जो व्यक्तिगत लड़ाई लड़ी, देश के लिये वह मंहगी साबित हुई।

कश्मीर में शेख अब्दुल्ला द्वारा महाराजा के खिलाफ चलाये गये 'कश्मीर छोड़ो आंदेलन' को नेहरू ने समर्थन ही नहीं दिया बल्कि उसके समर्थन में कश्मीर जाने का प्रयास भी किया। रियासत की सेना द्वारा जब उन्हें कोहाला पुल पर रोक दिया गया तो उन्होंने इसे अपना अपमान माना। महाराजा विलय के लिये पहले भी तैयार हो सकते थे किन्तु नेहरू जी ने यह शर्त रखी कि जब तक महाराजा जेल में बंद शेख अब्दुल्ला को रिहा कर उसे सत्ता नहीं सौंपेंगे तब तक विलय स्वीकार नहीं किया जायेगा।

किसी भी पक्ष से मांग न होने के बावजूद माउंटबेटन के बहकावे में संयुक्त राष्ट्र संघ में गये और जनमतसंग्रह के लिये तैयार हुए। उनकी ही इच्छा व दवाब के कारण महाराजा हरि सिंह को कश्मीर छोड़ने का संदेश देने का अप्रिय कार्य सरदार पटेल को करना पड़ा।

नेहरू जी की इच्छा के चलते ही अनुच्छेद 370 (पूर्ववर्ती अनुच्छेद 306 ए) अस्तित्व में आया जबकि इसके लिये न सरदार पटेल तैयार थे और न डॉ भीमराव

अम्बेदकर। जम्मू और लद्दाख में तीव्र विरोध और स्व. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के बलिदान के बाद भी वे अपनी नीतियों पर पुनर्विचार के लिये तैयार नहीं थे।

पं नेहरू की इन हिमालयी भूलों ने न केवल धरती के स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर को अलगाववाद की समस्या से निरंतर जूझने के लिये अभिशप्त कर दिया अपितु अंतरराष्ट्रीय शक्तियों को खुल कर खेलने का अवसर भी दे दिया।

तत्व - 8

लोकतंत्र का प्रहसन

जम्मू–कश्मीर में लोकतंत्र के नाम पर सदैव एक प्रहसन सा चलता रहा है। वार्ताकारों ने अपनी रिपोर्ट में चुनी हुई सरकारों को भंग करने, चुनावों में धोखा–धड़ी और फर्जीवाड़ा आदि को वहां पर उभरे असंतोष का कारण बताया है। लेकिन वे उन घटनाओं को उल्लेख नहीं करते हैं जब पूरे देश में अपनाई गयी नीति के अनुसार रियासतों में शासक के संरक्षण में जिम्मेदार सरकार का गठन किया गया था वहीं कश्मीर के मामले में महाराजा को विलय के साथ ही सारा प्रशासन जेल में बंद शेख अब्दुल्ला को सौंपने की शर्त लगायी जा रही थी।

रिपोर्ट जम्मू–कश्मीर को मिले विशेषाधिकारों की बात करती है किन्तु शेष देश से अलग किसी एक राज्य को विशेषाधिकार क्यों दिये जायें, इसका विवेचन नहीं करती। भारत के दो नागरिकों के मध्य किस लोकतांत्रिक पद्धति के आधार पर विभेद किया जा सकता है?

रिपोर्ट 1952 के नेहरू–शेख समझौते को आधार बना कर राज्य के संबंध में निर्णय लेने की बात कहती है। लेकिन संविधान में अनुच्छेद 370 मौजूद होने के बावजूद शेख से अलग से समझौता करने की आवश्यकता क्या थी, इस पर प्रकाश नहीं डाला गया। साथ ही, संविधान लागू होने से पूर्व तक राज्य के प्राधिकार रीजेन्ट (श्री कर्ण सिंह) में निहित होने के कारण बिना उनके अनुमोदन के ऐसे किसी भी समझौते की वैधानिकता नहीं थी। इसलिये जिस समझौते का कोई वैधानिक आधार नहीं है उसे राज्य की नीतियों का आधार कैसे बनाया जा सकता है।

वार्ताकार 1952 में शेख अब्दुल्ला और पं नेहरू के बीच हुए समझौते को आधार मानने की सिफारिश करते हैं किन्तु उसी शेख अब्दुल्ला के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के साथ 1974 में हुए समझौते की बात का उल्लेख नहीं करते, जबकि बाद में होने के कारण 1974 के समझौते को ही आधार बनाया जाना चाहिये था।

1974 के समझौते के अनुसार विधि निर्माण की अवशिष्ट शक्तियां राज्य में निहित रहेंगी लेकिन –

(1) भारत की प्रभुसत्ता और एकता को नकारने, विच्छिन्न करने, उस पर संदेह करने के उद्देश्य से की गयी कार्रवाइयों को रोकने, भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भाग को अलग करने या भारत के राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय गान या संविधान का अपमान करने की चेष्टाओं को रोकने संबंधी कानून बनाने का अधिकार संसद में निहित रहेगा।

(2) 1953 के बाद संसद द्वारा बनाये गये या राज्य पर लागू किये गये कानूनों अथवा समवर्ती सूची से जुड़े किसी भी मामले पर पुनर्विचार कर सकता है कि उसके दृष्टिकोण से कौन से कानून में संशोधन होना चाहिये या उसे रद्द कर देना चाहिये। उसके बाद भारतीय संविधान की धारा 254 के अनुसार उपयुक्त कदम उठाये जाने चाहिये।

उल्लेखनीय है कि शेख के मुख्यमंत्री बनने के बाद कानूनों की स्थिति का पुनरावलोकन करने के लिये कमेटी का गठन किया गया और यह निष्कर्ष निकला कि कोई भी संशोधन या रद्दीकरण करना आवश्यक नहीं है क्योंकि किसी भी कानून को लागू करने के पीछे कोई दुर्भावना नहीं थी और न ही इन कानूनों की बजह से कोई दुष्परिणाम निकला।

राज्य की संविधान सभा के गठन के समय 75 सीटों पर निर्वाचन होना था। दो सीटों के लिये नेशनल कांफ्रेंस के प्रत्याशियों के विरुद्ध किसी ने नामांकन नहीं किया इसलिये वे निर्विरोध निर्वाचित हो गये। जबकि शेष 73 सीटों पर नेशनल कांफ्रेंस के प्रत्याशियों को छोड़ कर शेष सभी के नामांकन रद्द कर दिये गये। इस प्रकार 75 संख्या वाले सदन में सभी सदस्य केवल नेशनल कांफ्रेंस के थे। इस राजनैतिक धोखा–धड़ी के संबंध में भी कोई मीमांसा वार्ताकारों ने नहीं की है।

उपरोक्त तत्वों की पहचान किये बिना जम्मू–कश्मीर के जटिल मिश्रण की व्याख्या कर पाना असंभव है। वार्ताकार स्वयं की पीठ ठोक कर अपने कार्य को न्यायसंगत नहीं ठहरा सकते।

खारिज की जाय वार्ताकारों की रिपोर्ट

जम्मू–कश्मीर के मसले पर गठित वार्ताकार दल की रिपोर्ट घोर आपत्ति जनक, राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के विरुद्ध तथा प्रारंभ से कश्मीर के प्रति जारी सरकार की नीति से विचलित करने वाली है। इसे सिरे से खारिज किया जाना आवश्यक है।

गृहमंत्रालय ने इस रिपोर्ट को सात महीने तक दबाये रखने के बाद अपनी वेबसाइट पर सार्वजनिक कर दिया। रिपोर्ट पर आयी प्रारंभिक टिप्पणियों ने ही साबित कर दिया कि यह देश के साथ किसी फरेब से कम नहीं है। वरिष्ठ पत्रकार जवाहर लाल कौल ने लिखा कि यह रिपोर्ट तो अलगाववादी हुर्रियत से भी लिखायी जा सकती थी। स्तंभकार एस. शंकर ने लिखा कि रिपोर्ट देख कर पता चलता है कि फई की दावतें बेकार नहीं गयीं। जानकारी हो कि गुलाम मुहम्मद फई नाम के आईएसआई से जुड़े एक कथित मानवाधिकारवादी के निमंत्रण पर तीन में से दो वार्ताकार अमेरिका गये थे।

रिपोर्ट को जारी करते हुए मंत्रालय की ओर से कहा गया कि यह वार्ताकारों के निजी विचार है और सरकार ने इस पर कोई फैसला नहीं लिया है। सरकार का मंतव्य इस पर सुविज्ञ बहस चलाने का है। सरकार ने वार्ताकारों को जो काम सौंपा, उसकी आधिकारिक रिपोर्ट उन्हें नियत समय के अंदर प्रस्तुत करनी चाहिये थी। प्रश्न यह है कि मंत्रालय की वेबसाइट पर जारी रिपोर्ट यदि वार्ताकारों के निजी विचार हैं तो उनका आधिकारिक प्रतिवेदन कहां है, जिसके लिये एक वर्ष का समय और सरकारी खजाने के करोड़ों रुपये खर्च किये गये?

प्रश्न यह भी उठता है कि ऐसे तीन लोग, जिनका जम्मू–कश्मीर से कोई प्रत्यक्ष सम्बंध नहीं है, न ही वे वहां के हितग्राही(स्टेक होल्डर) हैं, जम्मू–कश्मीर की समस्या पर उनके निजी विचारों को गृह मंत्रालय की वेबसाइट पर क्यों स्थान दिया गया है? रिपोर्ट आने के बाद इस विषय पर सैकड़ों–हजारों लोगों ने अपने निजी विचार व्यक्त किये हैं। क्या मंत्रालय इन्हें भी अपनी वेबसाइट पर स्थान देगा? यदि नहीं, तो उन तीन लोगों को ही क्यों अपने निजी विचार रखने के लिये यह प्लेटफॉर्म उपलब्ध कराया गया है?

अगला प्रश्न यह है कि यदि सात महीने तक अपने पास रखने के बाद भी मंत्रालय रिपोर्ट को लेकर किसी निष्कर्ष तक नहीं पहुंच सका तो इससे क्या साबित होता है? हुर्रियत के अनुसार तो वार्ताकारों के दल का गठन महज दिखावा था और केन्द्र सरकार केवल समय काटना चाहती थी। सात महीने में भी किसी निष्कर्ष तक न पहुंचना क्या इस आरोप की पुष्टि है? क्या मंत्रालय को रिपोर्ट में सचमुच कुछ ठोस नहीं मिला जिसके आधार पर वह किसी निष्कर्ष तक

पहुंच सकती? यदि ऐसा था तो उसने इस रिपोर्ट को खारिज कर कूडेदान में डालने के बजाय अपनी साइट पर क्यों डाला?

साथ ही, हर सम्बंधित पक्ष जानता है कि वार्ताकारों का कश्मीर से कोई प्रत्यक्ष सरोकार नहीं है, और मंत्रालय यह मानता है कि वार्ताकारों के विचार निजी हैं, तो सरकार यह क्यों चाहती है कि देश इस पर बहस करे? क्या देश को इससे महत्वपूर्ण कोई काम नहीं कि कभी सरकार तो कभी आईएसआई के खर्चे पर दावत उड़ाने वालों के फितूर पर बहस करता रहे?

अंतिम प्रश्न, सरकार को, खास तौर पर गृह मंत्री को यह जवाब देना ही चाहिये कि वार्ताकारों के दल के गठन के समय क्या उन्हें अमेरिका में बैठे गुलाम मुहम्मद फई के आईएसआई से रिश्तों के बारे में जानकारी नहीं थी अथवा फई के साथ वार्ताकारों में से दो के संबंधों की जानकारी नहीं थी। तथ्य बताते हैं कि सरकार को यह जानकारी पक्के तौर पर थी, फिर भी ऐसे लोगों को उन्होंने किस दवाब में वार्ताकार की जिम्मेदारी सौंपी। सरकार की इस नकली मासूमियत के पीछे क्या दवाब और प्रभाव काम कर रहे थे, यह देश जानना चाहता है।

बहरहाल, वेबसाइट पर जो रिपोर्ट डाली गयी है, सरकार द्वारा औपचारिक रूप से हाथ झाड़ने के बाबजूद यह मानना गलत नहीं होगा कि सरकार की भी यही मंशा है। अभी तक के सरकारी प्रयासों को देखें तो हालिया रिपोर्ट अपने आप में कोई स्वतंत्र दस्तावेज नहीं बल्कि एक श्रंखला की अगली कड़ी है। लंबे अतीत में न जायें तो भी, यूपीए– 1 में गठित सगीर अहमद कमेटी की रिपोर्ट के सूत्र वर्तमान रिपोर्ट में पहचाने जा सकते हैं। मनमोहन–मुशर्रफ के बीच ट्रेक–2 डिप्लोमेसी के नाम से चले वार्ताओं के दौर में भी जिन सहमतियों तक पहुंचने की बात की जाती रही वह भी इससे मिलती–जुलती ही थीं।

इसलिये यह विश्वास करने का कोई कारण नहीं है कि सरकार की सोच वार्ताकारों की सिफारिशों से कुछ ज्यादा भिन्न है। गृहमंत्री चिदंबरम पहले भी यह बयान दे चुके हैं कि भारत ने कश्मीरियों के साथ किये गये वादे नहीं निभाये हैं जिसके कारण समस्या उत्पन्न हुई है। हमें यह वायदे पूरे करने होंगे। यह संदेह भी सच से ज्यादा दूर नहीं हो सकता कि सरकार ने किन्हीं अज्ञात दवाबों के चलते कश्मीर के अलगाववादियों को कुछ देने का मन बना लिया है और रिपोर्ट के बहाने वह इसका आधार बना रही है। हां, वह इस पर होने वाली देश की प्रतिक्रिया से आशंकित अवश्य है इसलिये इन सिफारिशों को लागू करने से पहले चाहती है कि संभावित प्रतिक्रिया की तीव्रता का आकलन कर ले। इसके लिये ही उसने रिपोर्ट को निजी विचार बताते हुए सुविज्ञ बहस चलाने का दांव चला है।

रिपोर्ट में तथ्यों को जिस तरह संदर्भ से काट कर प्रस्तुत किया गया है तथा पूर्वनिश्चित सिफारिशों को स्वीकार्य बनाने के लिये जिस तरह तर्कों तथा

काल्पनिक संत्रास के मिश्रण में लपेटा गया है वह सरकार की नीतिगत बेईमानी की ओर संकेत करता है। रिपोर्ट में यहां–वहां प्रयोग किये गये कुछ आदर्शवाक्यों पर न जाते हुए इसे समग्र रूप से नकारा जाना आवश्यक है।

वार्ताकार और मीडिया

जम्मू-कश्मीर के लिये गठित वार्ताकारों के दल ने राज्य में मीडिया की भूमिका पर भी गंभीर टिप्पणियां की हैं। उसने अपनी रिपोर्ट में राज्य से छपने वाले समाचार पत्रों के आर्थिक स्त्रोतों की जांच किसी सक्षम संस्था द्वारा कराये जाने की अनुशंसा की है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि एक ओर प्रकाशकों का कहना है कि जो समाचार पत्र सरकार के संकेतों पर नहीं चलते उनके विज्ञापन रोक दिये जाते हैं वहीं दूसरी ओर सरकार का आरोप है कि कुछ समाचार पत्र निराधार खबरें छापते हैं तथा सरकार के विरुद्ध निंदा अभियान चलाते हैं। रिपोर्ट में मीडिया संस्थानों द्वारा अपने प्रकाशनों की प्रसार संख्या बढ़ा-चढ़ा कर बताने की भी बात कही गयी है।

प्रेस कौंसिल ऑफ इंडिया अथवा ऐडीटर्स गिल्ड ऑफ इंडिया द्वारा उक्त आरोपों की जांच तथा ऑडिट ब्यूरो ऑफ सर्कुलेशन द्वारा प्रसार संख्या की जांच करवाने की सिफारिश भी रिपोर्ट में की गयी है।

साथ ही, कुछ पत्रकारों द्वारा अपनी खबरों के लिये उद्धरणों के आविष्कार अर्थात स्वयं ही बयान गढ़ लेने की भी आलोचना की गयी है। रिपोर्ट के अनुसार राष्ट्रीय मीडिया में, कुछ पत्रकारों को छोड़ कर अधिकांश प्रायः हिंसा की घटनाओं तथा आरोप-प्रत्यारोप तक ही सीमित रहते हैं। कुछ पत्रकार ऐसे भी हैं जो चुनिंदा खबरों को ही लेते हैं और इस या उस राजनीतिक खेमे के पक्ष में रिपोर्टिंग करते हैं।

वार्ताकार दल के मुखिया दिलीप पड़गांवकर स्वयं एक जाने-माने पत्रकार हैं। उनके द्वारा मीडिया पर टिप्पणी का अपना अर्थ है। लेकिन उन्होंने जम्मू-कश्मीर की मीडिया पर जो आरोप लगाये हैं उनमें नया कुछ भी नहीं। उनकी नाक के नीचे दिल्ली में भी मीडिया में यही कुछ चलता है।

जम्मू-कश्मीर की मीडिया में यह स्थिति एक दिन में नहीं आयी है। जिस तरह से वहां कश्मीरी पंडितों से घाटी को खाली कराया गया उसी तरह से श्रीनगर स्थित तमाम पत्रकारों को वापस जाने को मजबूर किया गया। रेडियो और टीवी के पत्रकारों और कर्मचारियों को आतंकवाद के दौर में सरकार की नीति को प्रसारित करने की कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ी है। अनेक स्थानीय पत्रकार भी पत्रकारीय मूल्यों पर टिके रहने के कारण मारे गये। कई समाचार पत्रों के कार्यालय फूंक दिये गये। उनके हत्यारों में से एक को भी आज तक सजा नहीं हो सकी है।

इन परिस्थितियों में वातानुकूलित कार्यालयों में बैठ कर आपत्तियां जताना और उपदेश देना एक बात है और बिना सुरक्षा के अपने परिवार का पालन-पोषण

करते हुए कश्मीर घाटी में पत्रकारिता करना दूसरी बात। पड़गांवकर ने अपने कश्मीर दौरे के बीच शायद यह जानने की कोशिश नहीं की कि आतंकवाद की आंधी के बीच भी अपने फर्ज को पूरा करते हुए जो पत्रकार मारे गये उनके परिवारों की क्या हालत है।

अगर ऐसा हुआ होता तो उन्होंने जिस तरह आतंकवादियों और पत्थरबाजों को रियायतें देने और खैरात बांटने की सिफारिशें की हैं, उस फेहरिस्त में इन पत्रकारों की विधवाओं और बच्चों के भी नाम होते।

राष्ट्रीय मीडिया के अधिकांश ब्यूरो आज भी श्रीनगर में हैं किन्तु उनके ब्यूरो चीफ अथवा संवाददाताओं में इने-गिने लोग ही गैर-कश्मीरी, गैर-मुस्लिम हैं। पिछले दो दशकों के इस अंधेरे के बाद अगर कुछ अखबार जिन्दा हैं तो सिर्फ इसलिये क्योंकि अलगाववादियों को भी अपनी बात लोगों तक पहुंचाने के लिये उनकी जरूरत है। इसलिये यह अखबार अलगाववादी धड़ों के मुखपत्र के रूप में प्रकाशित हो रहे हैं।

समाचार पत्रों के आर्थिक स्त्रोतों की जांच कौन, कैसे और किसलिये करेगा ? अमेरिका में रह कर आई एस आई के लिये लॉबिंग करने वाले डॉ गुलाम नबी फई के साथ कश्मीर के एक प्रमुख समाचार पत्र के संबंध जग--जाहिर हैं। क्या उसकी जांच से कोई नया तथ्य हाथ लग जायेगा? लेकिन क्या पड़गांवकर में हिम्मत है कि इसके लिये उक्त समाचार--पत्र के प्रबंधन के खिलाफ कार्रवाई की सिफारिश करें? वे खुद भी तो उसी फई की दावत कुबूल कर चुके हैं।

आईएसआई के पैसे पर विश्वभ्रमण करने और पांचसितारा होटलों में रुक कर बढ़िया दावतें पाने वालों में दर्जनों भारतीय स्वनामधन्य पत्रकार शामिल हैं। इन पत्रकारों की संपत्ति, उनकी विदेशयात्राओं के खर्चे का हिसाब, उनके आलीशान बंगलों और गाडियों के काफ़िलों के हिसाब की भी जांच की सिफारिश इस रिपोर्ट में होती तो क्या ही अच्छा होता। जांच का बिन्दु यह भी हो सकता है कि विदेशों में तफरीह के बाद लौट कर उन्होंने समाचार पत्रों में जो लेख लिखे उनका झुकाव भारत सरकार की नीतियों के समर्थन की ओर था अथवा फई की कांफ्रेस के संस्मरण ही उन्होंने लेख लिख डाले थे।

लेकिन यह तफरीह करने वाले तो लौटने के बाद कांफ्रेस का एजेण्डा भूल सकते हैं, तफरीह कराने वाले नहीं। इसलिये जब वार्ताकारों की रिपोर्ट में भारत के साथ जम्मू-कश्मीर के एकीकरण के प्रयास सुझाये गये तो फई ने पड़गांवकर को टोकने में जरा भी समय नहीं लगाया। उसने उन्हें कश्मीर के एक स्वतंत्र इकाई होने की याद दिलाते हुए कहा कि न्यूयॉर्क घोषणा में यह स्पष्ट है कि नियंत्रण रेखा के दोनों ओर के जम्मू-कश्मीर के सभी लोगों को साथ लिये बिना कोई समझौता नहीं हो सकता। फई ने यह भी याद दिलाया कि 25 फरवरी 2005

को हुई न्यूयॉर्क घोषणा की ड्राफ्ट कमेटी के सदस्य स्वयं पड़गांवकर भी थे।

इस सबके बावजूद, दिलीप पड़गांवकर ने एक अच्छा मुद्दा उठाया है जिसे उठाने से मीडिया हमेशा बचती रही है। यदि उनकी सिफारिश मानते हुए इस प्रकार की कोई जांच होती है तो निस्संदेह मीडिया की जवाबदेही बढ़ेगी।

अनुलग्नक

जम्मू--कश्मीर के मुद्दे पर 22 फरवरी 1994 को भारत की संसद में एक सर्वसम्मत प्रस्ताव पारित किया गया था जिसमें कहा गया था कि पाक व चीन द्वारा अवैध रूप से अधिक्रांत भूमि को वापस लेना ही एक मात्र शेष कार्य है। उस समय केन्द्र में कांग्रेस पार्टी की सरकार थी तथा स्व. श्री नरसिम्हा राव प्रधानमंत्री थे।

वार्ताकारों की वर्तमान रिपोर्ट संसद के इस सर्वसम्मत प्रस्ताव की भावना का न केवल अनादर करती है बल्कि इसके विपरीत प्रस्ताव में जिस भूमि को किसी भी हाल में वापस लेने की बात कही गयी है उस पर संबंधित देशों की संप्रभुता को स्वीकार करने के लिये भी कहती है।

पाठकों की सुविधा के लिये उक्त संकल्प के मूल पाठ का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत है। इसे पढ़कर पाठक 1994 तक भारत सरकार, कांग्रेस तथा सदन की भावना तथा रिपोर्ट की सिफारिशों के आधार पर वार्ताकारों तथा वर्तमान सरकार की मंशा का तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं।

जम्मू और कश्मीर पर संसद का संकल्प

अध्यक्ष महोदय : संकल्प है :

यह सभा भारत में अशांति, वैमनस्य और विध्वंस पैदा करने के स्पष्ट उद्देश्य से पाकिस्तान तथा पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर में स्थित शिविरों में आतंकवादियों को प्रशिक्षण देने, हथियार और धन उपलब्ध कराने, जम्मू और कश्मीर में भाड़े के विदेशी सैनिक सहित प्रशिक्षित जंगजूओं की घुसपैठ में सहायता देने में पाकिस्तान की भूमिका पर गहरी चिंता व्यक्त करती है; इस बात को दोहराती है कि प्रशिक्षित जंगजू लोगों की हत्या, लूटपाट तथा अन्य घृणित अपराध कर रहे हैं, लोगो को बंधक बना रहे हैं तथा आतंक का वातावरण पैदा कर रहे हैं; पाकिस्तान द्वारा भारत के राज्य जम्मू और कश्मीर में विध्वंस और आतंकवादी गतिविधियों के निरंतर समर्थन और प्रोत्साहन की कड़ी निंदा करती है।

पाकिस्तान से आतंकवाद को अपना समर्थन देना तत्काल बंद करने की मांग करती है क्योंकि यह शिमला समझौते तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत अंतर्राज्यीय आचरण के प्रतिमानों का उल्लंघन है और दोनों देशों के बीच तनाव की मूल जड़ है;

इस बात को दोहराती है कि भारतीय राजनीतिक और लोकतान्त्रिक

व्यवस्था तथा संविधान समस्त नागरिकों के मानवाधिकार के संवर्धन एवं संरक्षण की पक्की गारंटी देते है; पाकिस्तान के भारत –विरोधी मिथ्या और झूठे प्रचार को अस्वीकार्य एवं निंदनीय मानती है; पाकिस्तान से उदभूत होने वाले अत्यंत भड़काने वाले बयानों पर गहरी चिंता व्यक्त करती है और पाकिस्तान से अनुरोध करती है कि वह ऐसे बयानों से बाज़ आये जिनसे वातावरण दूषित होता हो और जनता उत्तेजित हो ;

भारत के राज्य जम्मू और कश्मीर के पकिस्तान के अवैध कब्जे के अधीन की जनता की दयनीय परिस्थियों, मानवाधिकार हनन और उनके लोकतांत्रिक अधिकारों से उन्हें वंचित रखने पर खेद और चिंता व्यक्त करती है;

यह सभा भारत की जनता की ओर से, यह दृढ घोषणा करती है –

(क) जम्मू और कश्मीर राज्य भारत का अविभाज्य अंग रहा है और रहेगा तथा उसे शेष भारत से पृथक करने के किसी भी प्रयास का सभी आवश्यक साधनों से विरोध किया जाएगा;

(ख) भारत की एकता, प्रभुसत्ता और क्षेत्रीय अखंडता के विरुद्ध हर तरह के षड्यंत्रों का प्रतिरोध करने की इच्छा शक्ति और क्षमता भारत में है;

और यह मांग करती है कि –

(ग) पाकिस्तान को भारत के राज्य जम्मू और कश्मीर के सभी क्षेत्र खाली कर देने चाहिए जिन्हें आक्रमण कर हथिया लिया है

और यह संकल्प करती है कि–

(घ) भारत के आंतरिक मामलो में हस्तक्षेप करने के किसी भी प्रयास का डट कर मुकाबला किया जाएगा

संकल्प एकमत से स्वीकृत हुआ।

अध्यक्ष महोदय : संकल्प एकमत से पारित किया जाता है।

जम्मू-कश्मीर अध्ययन केन्द्र
करगिल भवन- अम्बफला कॉम्पलेक्स
जम्मू